चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
1st Feb. '59
50
8

Chandamama, Feb. '58 Photo by Madangopal

मुझे देख.

प्रेषक:

आप और

मेट्रिक प्रणाली

चाहे आप खरीदार हों या विक्रेता आपको यह पता चल जाएगा कि नाप-तोल की मेट्रिक प्रणाली से हिसाब-किताब बड़ा सरल हो जाता है ।

समस्त देश के लिए नाप-तोल की एक प्रणाली हो जाने से केवल व्यापार वृद्धि में सहायता ही नहीं अपितु इससे राष्ट्रीय-एकीकरण में सहयोग भी मिलेगा ।

१ अक्तूबर, १९५८ से मेट्रिक बाटों का प्रयोग कुछ चुने हुए क्षेत्रों में कानूनी हो गया है ।

यह परिवर्तन धीरे धीरे अन्य क्षेत्रों में भी लाया जाएगा ।

व्यापारिक बाट निम्नलिखित हैं :–									
ढलवाँ लोहे के बाट			पीतल / काँसे के बाट						
किलोग्राम		ग्राम	केवल सोना चाँदी के लिए		सोना चाँदी और अन्य वस्तुओं के लिए				
			किलोग्राम		किलोग्राम	ग्राम			
५०	५	५००	२०	५	१	५००	५०	५
२०	२	२००	१०	२		२००	२०	२
१०	१	१००				१००	१०	१
१ किलोग्राम=१,००० ग्राम=८६ तोले									

मेट्रिक प्रणाली

सरलता
व
एकरूपता
के लिए

भारत सरकार द्वारा प्रसारित

डी०ए० ५८/१२०

उलझन सुलझ गई

मैं एक सिविल इंजीनियर हूं। मेरे पिता दफ्तर के एक मामूली क्लर्क थे। ५ वर्ष पहले तक मेरे दिमाग में यह उलझन बनी हुई थी कि आखिर मेरी इतनी खर्चीली शिक्षा का रुपया पिताजी ने कैसे जुटाया होगा! जिस दिन मैं अपने प्रथम वेतन का चेक घर लाया, उसी दिन पिताजी ने मुझे बताया था कि किस प्रकार उन्होंने मेरी माताजी के आभूषण बेच कर राष्ट्रीय बचत सर्टिफिकेट खरीदे थे। यही नहीं, वे नियमित रूप से बचाकर और भी रकम इकट्ठी करते रहे। उन्होंने मुझे भी सलाह दी कि मैं भी उनका अनुसरण करूं। मुझे खुशि है कि मैंने उनका उपदेश मान लिया था। फलस्वरूप आज मेरे पास एक छोटी सी पूंजी इकट्ठी हो गई है जिससे मैं विदेश में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहा हूँ।

राष्ट्रीय योजना बचत सर्टिफिकेट और भारत सरकार की अल्प बचत योजना की अन्य मदों में लगाया हुआ धन आपको कर मुक्त ब्याज सहित वापस मिल जाता है। इसमें आपका तो लाभ है ही, साथ ही देश की विकास योजनाओं के लिए भी धन एकत्र हो जाता है।

१२-वर्षीय राष्ट्रीय योजना बचत सर्टिफिकेट

- प्रतिवर्ष ५.४१ प्रतिशत कर मुक्त ब्याज
- ये ५, १०, ५०, १००, ५००, १००० और ५००० रुपये की राशि में सभी डाकखानों में आसानी से मिल सकते हैं।
- भारत सरकार द्वारा प्रमाणित

अल्प-बचत-योजना के अंतर्गत अन्य सरकारी मद :

१०-वर्षीय ट्रेज़री सेविंग डिपाज़िट सर्टिफिकेट

पोस्ट आफिस सेविंग बैंक डिपाज़िट

राष्ट्रीय बचत संगठन

अधिक जानकारी और नियम आदि नेशनल सेविंग्स कमिश्नर, नागपुर से आ सकते

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

प्रौढ़ शिक्षा के लिए बहुत कुछ किया जा रहा है। भारत की करीब नब्बे प्रतिशत जनता अशिक्षित है। शिक्षा के अभाव में, वे ऐसे अवसरों से वंचित रहते हैं जो शिक्षितों को प्राप्त हैं।

वयस्कों में निरक्षरता समाप्त करने का उपाय यह है कि आज बच्चों को शिक्षित कर दिया गया, ताकि कल प्रौढ़ों को शिक्षित करने की कोई आवश्यकता न रहे। प्रजातन्त्र की जड़ें तब तक न जमेंगी जब तक उसका पालन करनेवाली जनता शिक्षित व साक्षर न होगी। प्रजातन्त्र शिक्षित समाज का ही शासन साधन है। इसलिए आवश्यक है कि प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य ही न हो अपितु निश्शुल्क भी हो।

वर्ष : १०   फरवरी १९५९   अंक : ६

मुख - चित्र

कृष्ण के जाते ही विदुर ने कुन्ती के पास जाकर कहा—"जो नहीं होना चाहिये था वह होने जा रहा है। युद्ध होकर रहेगा।" तब कुन्ती ने मन ही मन यह सोचा—"युद्ध तो बहुत भयंकर होता है। दुर्योधन की तरफ भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि भाग लेंगे। परन्तु भीष्म और द्रोण को मेरे पुत्रों पर अभिमान है। केवल कर्ण ही उनसे बदला लेने की ठाने बैठा है। जैसे भी हो, अच्छा होगा, यदि कर्ण को खुश किया जा सका। आखिर वह मेरा लड़का ही तो है। यह मैं उसे बताऊँगी।"

यह सोच, कुन्ती भागीरथी के किनारे गई। वहां उसे कर्ण नहा धोकर पूर्व की ओर मुँह करके, हाथ ऊपर उठाकर जप करता दिखाई दिया। कुन्ती उसके पीछे जाकर बैठ गई। कर्ण ने अपना जप समाप्त करके कुन्ती को देख कर पूछा—"देवी, किस काम पर आई हो? मुझसे क्या चाहती हो।"

"बेटा, क्या तुम कुन्ती के लड़के नहीं हो? क्यों कहते हो कि तुम राधा के लड़के हो? क्या तुम राधा के गर्भ से पैदा हुये? जब मैं कन्या थी, तभी मैंने तुम्हें सूर्य की कृपा से जन्म दिया था। जिस राज्य को पहिले अर्जुन ने जीता था, अब कौरवों ने हथिया लिया है। उस राज्य पर तुम ही पाण्डवों से मिलकर राज्य करो। तुम भी बलराम और कृष्ण की तरह हिल मिलकर रहो।" कुन्ती ने कहा।—"माँ, हो सकता है, तुम मेरी माँ हो पर जो तुमने मेरे साथ किया है, वह शायद कोई शत्रु भी नहीं करता। जो सूत के घर पाला पोसा गया हो, क्या वह चाहने पर भी क्षत्रिय हो सकता है? अगर तेरी बात सुनकर पाण्डवों से जा मिलूँ तो लोग क्या मुझे डरपोक नहीं कहेंगे? मुझे देखकर ही दुर्योधन युद्ध में उतर रहा है। मुझे उसकी तरफ़ से लड़ना ही होगा। तेरे पुत्रों में सिवाय अर्जुन के मैं किसी के प्राण नहीं लूँगा। युद्ध में मुझे या अर्जुन को मरना ही होगा। अर्जुन के मरने पर मैं तेरे पुत्रों में एक हो जाऊँगा। चाहे मैं मरूँ या अर्जुन, तेरे पाँचों पुत्र सुरक्षित रहेंगे।" कर्ण ने कहा। "बेटा, तुमसे भाग्य ही इसतरह कहला रहा है। उसे कौन रोक सकता है?" कुन्ती, कर्ण को आशीर्वाद देकर अपने घर चली गई।

अमूल्य वस्तु

एक राजा के तीन लड़के थे—देव, शंख, और अमन्द। उस देश के सेनापति ने सैनिकों को घूंस देकर अपनी ओर कर लिया और उनकी मदद से राजा को मरवा दिया....और राजकुमारों को देश से निकाल दिया। तीनों राजकुमार—एक बुढ़िया के घर ठहरे। वे आपस में यों बातें करने लगे। "सबसे अधिक मूल्यवाली चीज है, सम्पत्ति। यदि वह हो तो सब कुछ किया जा सकता है।" देव ने कहा। "नहीं, सेना, उसी की मदद पाकर ही तो सेनापति ने हमें देश से निकाल दिया।" शंखने कहा।

"हम तीनों, तीन दिशाओं नें निकलें। जो हम तीनों को मुल्य लगे उसे पाकर, हम दस वर्ष बाद यहीं मिलेंगे।" शंख ने कहा। अगले दिन देव पूर्व की ओर, और शंख पश्चिम की ओर निकले, अमन्द जो, उत्तर की ओर गया था, वापिस लौट आया—और बुढ़िया की लड़की से शादी करके वहीं रहने लगा। दस वर्ष बीत गये। देव, पूर्व की ओर से सोना लेकर एक काफिले के साथ आया, पश्चिम से शंख सेना लेकर आया। "देखा! मैं अपने सोने से तुम्हारी सारी सेना खरीद सकता हूँ।" देव ने कहा। "असम्भव!—मैंने शंख बजाया की नहीं, मेरी सेना तेरे काफिले का खातमा कर देगी।" शंख ने कहा। इतने में अमन्द घर में से निकला। "अरे, अभी आ गये—तुम कौन-सी अमूल्य वस्तु लाये हो!" दोनों भाइयों ने उससे पूछा। "सन्तोष" अमन्द ने उनसे कहा।

असफल डाकू

कन्नोज के पासवाले जंगल में डाकुओं का एक गुट रहा करता था। वे कभी कभी शहर में आते, डकैतियाँ करते और रुपया पैसा ले जाकर जंगल में अपने रहने की जगह छुपा दिया करते। जब शहर में डाका डालने का मौका न मिलता तो वे गाँवों में उत्पात मचाते।

एक बार इन डाकुओं ने नगर में चोरी करने का निश्चय किया। डाका डालने से पहिले वे शहर में, वेष बदलकर घूमे फिरे। उन्होंने मालूम किया कि किस घर में चोरी की जा सकती थी। उन्हें दो घर मिले। एक, एक कंजूस का घर था। किसी को न मालूम था कि उसके घर में कितना धन था। वह हमेशा फटे-पुराने कपड़े पहिनकर गरीब की तरह रहता। अगर दिन में कहीं घर से बाहर जाना होता तो घर में तीन तीन ताले लगाकर जाता। रात में अन्धेरा होने से पहिले ही सब दरवाजे बन्द करके सो जाता। घर में उस कंजूस के साथ रहनेवाला भी कोई न था। और तो और एक नौकर तक भी न था। बड़ा कमीना था वह।

दूसरा घर एक ठाकुर का था। वह बहुत धनी था। घर में नौकर ही नौकर थे। उसे शिकार खेलने का शौक था। जिन्दे जंगली जानवरों को वह पिंजड़ों में भी रखता।

इन दोनों घरों को लूटने के लिए डाकू दो टोलियाँ बनाकर गये। उन डाकुओं ने, जो बड़ी बड़ी डकैतियों में भाग न ले पाते थे, अपना अलग गुट बनाकर, शहर के छोटे मोटे घरों में डाका डालने का निश्चय किया।

विनय कुमार

दो दिन उन्होंने तैयारी की, तीसरे दिन वे शहर गये।

छोटे मोटे घर लूटनेवाले गुटने, एक छोटे दुमँजले में रहनेवाली बुढ़िया को लूटने की ठानी। गली में दो चोर खड़े हो गये और तीसरा मकान में घुसा। बुढ़िया एक टूटी फूटी चारपाई पर खुर्राटे मारती सो रही थी। और चोर एक एक चीज लेकर मुंडेर पर से गली की ओर फेंकने लगा। लगातार सब चीज़ों के फेंक देने के बाद डाकू ने बुढ़िया का बिस्तर भी लेना चाहा! इसलिये उसने बुढ़िया को चारपाई से नीचे उतार दिया। वह जल्दी जल्दी बिस्तर समेटने लगा।

बुढ़िया ने उठकर कहा—"यह क्या कर रहे हो बेटा! मेरी सब चीज़ें उस रईस के आँगन में क्यों फेंक रहे हो!"

डाकू सोचने लगा कि क्या उसने बुढ़िया की चीज़ें गली में नहीं फेंकी थीं! उसे सन्देह हुआ। यह देखने के लिए कि चीज़ें उसके साथियों ने ली थीं कि नहीं वह मुंडेर के पास गया। तुरत बुढ़िया ने उसके पैर पकड़कर उसको गली में फेंक दिया। गिरने पर उसके गले में चोट लगी और वह वहीं ठंडा हो गया। दोनों चोर डर के मारे भाग गये।

जो डाकू कंजूस का घर लूटने गये थे, वे उसके घर आधी रात के करीब पहुँचे। सारा घर किले की तरह था। बिना दरवाजा तोड़े अन्दर नहीं जाया जा सकता था।

"तोड़ने पर तो आवाज होगी। अड़ोस-पड़ोस के लोग उठकर हमारे काम में बाधा पहुँचायेंगे। इसलिये चाकू से छेद करना है, ताकि हाथ अन्दर जा सके, फिर चटखनी खोल दूँगा।" टोली के सरदार ने कहा।

साथ न भाग सकूँगा। अगर मैं पकड़ा गया तो मेरी बोटी बोटी काटकर छोड़ेंगे। इसलिये मेरा हाथ काट दो।" सरदार ने अपने साथियों से कहा।

उन्होंने वैसे ही किया। उसके ठुंडे हाथ पर जितने कपड़े मिले, उतने बाँध दिये ताकि खून न गिरे और भागने का रास्ता न मालूम हो जाये। परन्तु नगर के लोग उनका पीछा करने लगे।

ठुंडा डाकू और साथियों के साथ न भाग सका। उसने चाकू से आत्म हत्या कर ली—बाकी जैसे तैसे जान बचाकर अपनी जगह पहुँचे।

पर जब वह किवाड़ में छेद कर रहा था तब कंजूस अन्दर जग गया। चोर अन्दर हाथ रखकर चटखनी पकड़नेवाला ही था कि कंजूस ने उसकी हथेली में एक कील गाड़ दी। उसका हाथ दरवाजे से जा चिपका।

इस बीच कंजूस खिड़की खोलकर चिल्लाया—"चोर चोर" वह जोर से चिल्लाया ताकि आसपास के लोग जान सकें। पड़ोसी, गंड़ासे, लाठी, कटार, लेकर कंजूस के घर भागे।

"भाइयो! हमें भागना होगा। मेरा हाथ अगर न काटा गया तो मैं आपके

जो ठाकुर का घर लूटने गये थे, उन्हें बहुत कोशिश करनी पड़ी। अपनी कोशिश कामयाब करने के लिए, उन्होंने कुछ भी अछूता न छोड़ा। उन्होंने जंगल में पकड़े एक भालू का चमड़ा निकाला। उसे सुखाकर उसमें एक अपने बहादुर साथी को सी दिया। जिस दिन डाका डालना था उसी दिन शाम को दो डाकू शिकारी का वेष बदलकर, अपने साथी को एक पिंजड़े में रखकर ठाकुर के पास गये। उन्होंने उससे कहा—"हम यह भालू आपके लिए

उपहार में लाये हैं। स्वीकार कीजिये।" ठाकुर ने उनकी बातों पर विश्वास करके अपने नौकरों से कहा—"अरे! इसे हमारे भालुओं के साथ रखो।"

चोर घबराये। उन्होंने कहा—हुजूर! कुछ दिन पहिले यह बीमार था। अभी अभी ठीक होने लगा है। इसलिये इसको ऐसी जगह रखिये जहाँ दक्षिणी हवा आती हो।" ठाकुर इसकेलिये भी मान गया। उसने उन्हें इनाम देकर भेज दिया।

उस दिन रात को जब सब सो गये थे, भालू का चमड़ा पहिने हुये चोर ने पिंजड़े से निकल कर ठाकुर के घर के किवाड़ खोल दिये। बाहर खड़े उसके साथी अन्दर आगये।

"खजाना पश्चिम की ओर के कमरे में है। रोशनी करते समय एक मन चान्दी उस कमरे में रखी गई थी। कमरे की चाबी बड़े पहरेदार के पास है। वह वराण्डे में सो रहा है।" भालूवाले डाकू ने साथियों से कहा।

उसके साथियों ने बड़े पहरेदार को मार कर—चाबियाँ ले लीं। उन्होंने खजाने की ओर जाते हुये, अपने भालू

वाले साथी से कहा—"तुम यहीं घूमते रहो। अगर कोई नौकर जगा भी तो तुम्हें देखकर डरकर अन्दर भाग जायेगा।" वह इधर उधर आँगन में घूमने लगा।

उन्होंने यह सोचकर गल्ती की थी कि ठाकुर के नौकर भालू को देखकर डर जायेंगे। जंगली जानवरों के तो वे भली-भाँति आदी थे।

डाकुओं के खजाना में चले जाने के बाद एक नौकर आँगन में आया। उसे वह भालू बाहर घूमता दिखाई दिया, जिसको पिंजड़े में होना चाहिये था। तुरत उसने दूसरों को भी पुकारा। नौकरों ने भाले, तलवार, मशाल लेकर भालूवाले चोर को चारों ओर से घेर लिया। इस बीच किसी ने शिकारी कुत्ते खोल दिये। वे भालूवाले चोर को खींचने लगे। चोर ने बाहर भागने की सोची। पर नौकरों ने दरवाजे बन्द कर दिये। भालूवाला चोर, अपनी प्राण रक्षा के लिए नाखूनों से कुत्तों को खरोंचने लगा। तुरत एक नौकर ने उसके पेट में भाला भोंक दिया।

भालूवाले डाकू के पास जाकर नौकरों ने देखा—तो वह भालू न था आदमी था। वह जरूर चोर होगा। उसको जिन्होंने उपहार में दिया था वे भी चोर ही होंगे। इसी चोरने पिंजड़े से से निकलकर, अपने साथियों को अन्दर आने दिया होगा।

इन सब बातों के सूझते ही नौकर खजाने की ओर भागे। वहाँ उन्होंने बाकी डाकू देखे।

इसप्रकार उस दिन के उनके सब डाके असफल रहे।

[७]

[चन्द्रवर्मा नदी में बहता बहता एक जंगल के किनारे लगा। वह कुछ दूर घने जंगल में गया था कि पेड़ों का कराहना, चिल्लाना उसे सुनाई दिया। इतने में उसके सामने तीन सिरोंवाला एक साँप आया। उसके पीछे पीछे चलता, चन्द्रवर्मा एक जादूगरनी के घर में पहुँचा। जादूगरनी ने उसकी अगवानी की, उसने उसे काँच के गोल में वीरपुर नगर की स्थिति, सेनापति धीरमल्ल के घेरे जाने का दृश्य दिखाया। उसके बाद:—]

चन्द्रवर्मा के कन्धे पर हाथ रखकर कपालिनी ने कहा—"बेटा, घबराओ मत। कष्ट हमेशा नहीं रहते। तुम फिर कभी अपना राज्य जीत सकते हो। निराश मत हो। अगर तुमने अपना वचन निभाया, तो उसके बाद मैं अवश्य तुम्हारी हर तरह से मदद करूँगी।"

कपालिनी की बातों से चन्द्रवर्मा का हौसला बिल्कुल न बढ़ा। सौ योजन दूर शंख नाम के मान्त्रिक के जादूवाले घर में घुसकर उसे कोई चीज़ लानी होगी। अगर वहाँ से वह जिन्दा वापिस आ सका, तभी कपालिनी उसकी मदद कर सकती थी। अगर कहीं मर गया तो...."

कपालिनी ने इस तरह निश्वास छोड़ा, जैसे वह जान गई हो कि चन्द्रवर्मा क्या चिन्ता कर रहा था। उसने मुस्कराते हुए

कहा—"बेटा वर्मा, मैं जान गई हूँ कि तुम क्या सोच रहे हो। अगर तुम अभी यहाँ से जाना चाहो तो जा सकते हो। मुझे कोई एतराज़ नहीं है। न काल नाग, न जंगल के पेड़ ही तुम्हारा कुछ बिगाड़ेंगे। यह मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ। ठीक है न!"

जब चन्द्रवर्मा ने यह सुना कि वह वहाँ से जा सकता था, तो वह चिन्तित हो गया। अगर वह जाना भी चाहता, तो भी ऐसी कोई जगह न थी, जहाँ वह जा सकता था। वह जिस हालत में था, उसमें जंगलों में, पहाड़ों में अकेले घूमने के सिवाय वह कुछ न कर सकता था। पिता मर चुका था। राज्य शत्रुओं ने हथिया लिया था। विश्वासपात्र मित्र, सुबाहु का कहीं पता न था।

"कपालिनी! मैं तुम्हारी भरसक मदद करने की कोशिश करूँगा। शंख नामक मान्त्रिक के घर से मुझे कौन-सी चीज़ लानी है!" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

कपालिनी का मुँह खिल-सा गया। वह गद्दे पर से उठी। हाथ में पकड़ी मनुष्य की हड्डी से, दीवार के पासवाले लकड़ी के खिलौने के सिर पर उसने जोर से मार कर कहा—"भैरव! तुरत हमारे अतिथि के लिए अच्छी अच्छी चीज़ें खाने के लिए लाओ। समझे।"

तुरत "हूँ...." करता, एक विशाल काय व्यक्ति वहाँ प्रत्यक्ष हुआ। उसकी आवाज से सारा घर गूँज उठा—"यह लो अच्छी चीज़ें!" उसने सोने के थाल में हर तरह की स्वादिष्ट चीज़ें, पक्वान आदि, चन्द्रवर्मा के सामने रखे।

चन्द्रवर्मा को बड़ी जबर्दस्त भूख लगने लगी। जब तक वह भोजन करता रहा

"बेटा, चन्द्रवर्मा, अब मुख्य विषय पर बात करें। शंख के जादू के घर में एक महान शक्तिवाला शंख है। एक जड़ी के कषाय को उसमें डालकर उसे पिया जाय तो बुढ़ापा जाता ही है, जवानी भी वापिस आ जाती है। हज़ार वर्ष तक बुढ़ापा पीनेवाले के पास आने का नाम नहीं लेता। एक हज़ार पचास वर्ष पहिले मैंने वह चिकित्सा पाई थी। तब मान्त्रिक शंख मेरा शत्रु न था। उसके बाद वह मेरा बड़ा दुश्मन हो गया।" कहते कहते कपालिनी ने पीछे मुड़कर देखा। कुछ दूरी पर खड़े भैरव को अपनी ओर ताकते हुए देख उसने कहा—"नीच कहीं का! तूने अपनी मनहूस आदत न छोड़ी।" फिर उसने मनुष्य की हड्डी उसके सिर पर ज़ोर से मारी। तुरत भैरव ज़ोर से कराहता-कराहता फिर लकड़ी का खिलौना हो गया और तत्क्षण दीवार के पास जा खड़ा हुआ।

"वह तो तुम्हारा सेवक है। क्यों उसको इतनी ज़ोर से मारती हो!" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

कपालिनी ने ज़ोर से हँसकर कहा—"वह मेरा सेवक अवश्य है, पर मौका

तब तक एक तरफ़ कपालिनी और दूसरी तरफ़ भैरव खड़े रहे। पेट भर खाने के बाद, बाकी चीज़ों के साथ सोने के थाल को कुछ दूर हटाते ही, भैरव हाथ धोने के लिए पानी लाया।

"कपालिनी, जिसके हाथ में काल नाग, और भैरव जैसी भयंकर शक्तियाँ हैं—वह शंख के घर से, जो चीज़ चाहती है, स्वयं क्यों नहीं मँगा लेती! उनकी अपेक्षा मुझमें ऐसी कौन-सी अधिक शक्ति है! कहीं इसमें कोई धोखा तो नहीं है!" चन्द्रवर्मा सोचने लगा।

मिलने पर मेरा भेद जानकर मुझे छोड़कर वह शंख के पास जाने में नहीं हिचकेगा। वह इतना नीच है। इन तुच्छ भूतों से यही तो झंझट है। अगर उनको कोई अपने मालिक से अधिक शक्तिशाली मिलता है तो उसके पास जाने की कोशिश करते हैं। इसीलिए मैं उसे लकड़ी का खिलौना बनाकर वहाँ फेंक देती हूँ। शंख ने मेरे भेद पाने के लिए बहुत-से लोगों को भेजा। उनकी बुरी हालत तो तुमने देखी ही है।" कहते हुए उसने दरवाजे पर लटके कपालों के तोरण को, चन्द्रवर्मा को दिखाया।

कपाल के तोरण को देखकर, चन्द्रवर्मा को काठ मार गया। तब तक उसने उनकी ओर ध्यान से नहीं देखा था। शंख द्वारा भेजे गये दूत मार दिये गये थे, और उनके कपालों से वह तोरण बनाया गया था। उसी तरह कपालिनी द्वारा भेजे गये दूत मरने के बाद शंख के गले में माला के रूप में लटक रहे होंगे।

"कपालिनी, शंख के पास जो तुमने दूत भेजे होंगे, उनकी हालत भी तो यही हुई होगी!" चन्द्रवर्मा ने सन्देह करते हुए पूछा।
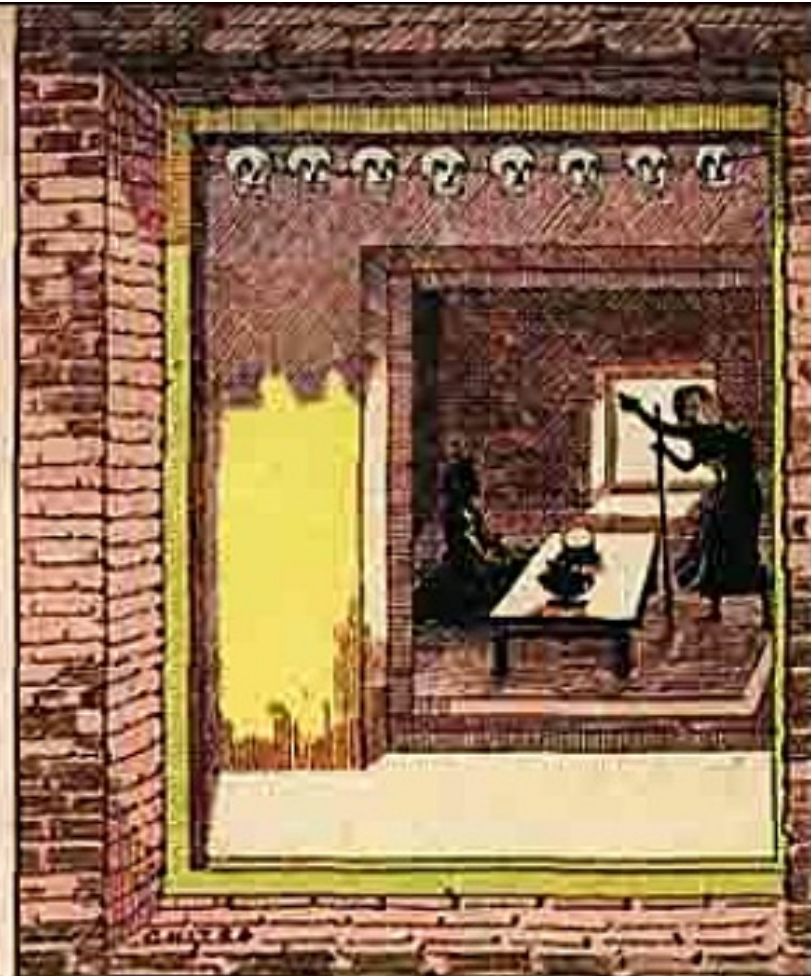
कपालिनी ने सिर इस तरह हिलाया, जैसे न कह रही हो। उसने कहा—मैंने उसके पास अभी तक किसी को नहीं भेजा है। उस शक्तिशाली शंख को कौन चुराकर ला सकता है, यह मैं जानती हूँ।"

"वह मैं ही हूँ यही तो तुम्हारा ख्याल है?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।

"हाँ वर्मा," कपालिनी ने खुश होकर कहा। "तुम नौजवान हो। यही नहीं, क्षत्रिय हो। और अपने बन्धु, मित्र, राज्य, सभी कुछ खोये बैठे हो। तुमसे अधिक

साहसी मुझे कहाँ मिलेगा? इस प्रयत्न में यदि तुम सफल हुए तो तुम राजा ही न रहोगे, बल्कि सम्राट बन जाओगे। यह कैसे बन सकोगे उस शंख के मेरे पास आने के बाद, मैं बताऊँगी।" कपालिनी ने कहा।

कपालिनी की बातें सुनकर चन्द्रवर्मा का हौसला बढ़ा। परन्तु ऐसी बात न थी कि उसके दिल में सन्देह ही न रहा हो। हो सकता है कि जैसे भी हो उससे शंख लिवा लाने के लिए, वह जादूगरनी सरसब्ज बाग दिखा रही हो।

"अच्छा, यह बताओ मान्त्रिक के घर जाने का कौन-सा रास्ता है। मैं अभी जाता हूँ।" चन्द्रवर्मा ने कहा। उसमें न जाने कहाँ से उत्साह आ गया।

कपालिनी ने घर से बाहर रास्ता दिखाया। उसके पीछे पीछे चन्द्रवर्मा गया। सूर्य पश्चिम की ओर जा रहा था। कपालिनी ने उत्तर दिशा की ओर दिखाते हुए कहा—"इस दिशा की ओर सौ योजन जाने के बाद, वह पहाड़ है, जिस पर शंख रहता है, उसका घर है। उस घर के पूजा के कमरे में, वह शक्तिशाली शंख, एक साँप के गले में लटक रहा होगा। वह साँप, दीवार के एक खूँटे से लटक रहा होगा। तुम मान्त्रिक शंख से दोस्ती करके, नहीं तो धोखा देकर, नहीं तो उसको मारकर, उस शंख को जैसे तैसे जरूर लाओ।"

"क्या उतने बड़े मान्त्रिक को मारना भी सम्भव है?" चन्द्रवर्मा ने आश्चर्य से पूछा।

"क्यों नहीं? चाहे कोई कितना बड़ा मान्त्रिक ही न हो, किसी न किसी दिन उसको मरना ही पड़ता है। शंख इसका

अपवाद नहीं है। उसको किस तरह मारा जा सकता है, यह तुम्हें ही कोशिश करके मालूम करना होगा।" कपालिनी ने कहा।

"अच्छा, तो मैं चलता हूँ।" कहकर अपनी तल्वार की ओर एक बार देखकर चन्द्रवर्मा आगे बढ़ा।

चन्द्रवर्मा अभी दो तीन कदम आगे गया ही था कि कपालिनी भागी भागी पीछे से आई। उसके कन्धे पर हाथ रखकर उसने कहा—"बेटा वर्मा, एक मुख्य बात तो मैं भूल ही गई। शंख के पास एक आश्चर्यजनक पक्षी है। उसके बल और तेज़ी के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। उसका नाम अग्नि पक्षी है। वह हर रोज़ शाम को आहार की खोज के लिए निकल पड़ता है और आधी रात के समय वापिस आता है। जब वह आकाश में उड़ता है, तो आग की लपटें निकलती हैं। उनकी रोशनी में बिना भटके तुम मान्त्रिक के घर पहुँच सकते हो। तुम्हें कुल दो सौ योजन आना जाना होगा। तुम्हारा क्या ख्याल है कि कितने दिनों में यह काम कर सकोगे?"

कपालिनी के इस प्रश्न से चन्द्रवर्मा को अचरज हुआ। जंगलों में, पहाड़ों पर, ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर सौ योजन चलना होगा। उसके बाद बलशाली शंख को वश में करके उसके शंख को लेना होगा। वापिस फिर सौ योजन चलना होगा। भगवान ही जानते हैं कि रास्ते में कितनी मुसीबतें झेलनी होंगी। उस हालत में कैसे यह कहा जा सकता है कि मैं कब तक वापिस आ सकूँगा।

चन्द्रवर्मा की चिन्ता कपालिनी भी ताड़ गई। उसने कहा—"हाँ, ऐसी बात

नहीं है कि मैं तुम्हारे साहस के बारे में नहीं जानती हूँ। परन्तु अगर एक वर्ष में तुम शंख न ला सके तो उससे मेरा कोई उपयोग न होगा। अगर एक रोज़ भी अधिक हो गया तो वह मेरे लिए बेकार है। अगर तुम किसी कारणवश इस समय में वापिस न आ सके तो मैं यहाँ न रहूँगी। परन्तु मैंने जो तुम्हें सहायता देने का वचन दिया है, उसे न भूलूँगी। काँच के गोलेवाले मेज की दराज में एक ताड़ का पत्र रखती जाऊँगी। उसमें यह लिखती जाऊँगी कि उस शंख का कैसे अपने हित के लिए तुम उपयोग कर सकते हो।" कपालिनी ने कहा।

कपालिनी के इन बातों पर चन्द्रवर्मा को पूरा विश्वास हो गया। वह यह जान गया कि वह जादूगरनी उसे धोखा नहीं दे रही थी। चन्द्रवर्मा ने उसके दोनों हाथ पकड़ कर प्रेम से कहा—"एक साल में मैं उस शंख को लेकर वापिस आ जाऊँगा। तुम घबराना मत। बेफिक्र रहो।" कहता उसके हाथ छोड़कर आगे चला।

तुरन्त कपालिनी ने "काल नाग" (तीन सिरवाले साँप) को बुलाया। साँप फुँकारता उसके पास आया। कपालिनी ने चन्द्रवर्मा को दिखाकर कहा—"उसके साथ जाओ, जंगल पार करने तक उसकी रक्षा करो।"

काल-सर्प एक छलांग में चन्द्रवर्मा के आगे पहुँचा और उसे रास्ता दिखाने लगा। पेड़ों में कुछ दूर जाने के बाद चन्द्रवर्मा ने पीछे मुड़कर देखा। उसे कपालिनी न दिखाई दी। पर जहाँ घर होना चाहिए था, वहाँ गिद्ध पंख और शेर के आकार में एक विकृत रूप दिखाई दिया।

(अभी और है)

दुष्ट से दोस्ती

जंगल में, एक पेड़ पर एक बगुला और एक कौआ रहा करते थे। कौआ बड़ा खराब था फिर भी बगुले ने सोचा—"अगर हम अच्छे हों, तो दूसरों की बुराई हमारा क्या बिगाड़ेगी!" और वह उसके साथ रहने लगा।

एक बार एक राहगीर उस तरफ़ से गुज़रा। गरमी अधिक थी। इसलिए वह उस पेड़ की साया में सो गया। थोड़ी देर बाद उस राहगीर पर धूप आई। यह देख बगुले ने अपने पंख फैलाकर उसके मुँह पर छाया की।

बगुले को यह करता देख कौआ हँसा और राहगीर पर एक पत्थर फेंककर वह पेड़ पर से भाग गया। पत्थर लगते ही राहगीर दर्द के मारे उठा। उसे पेड़ पर बगुला दिखाई दिया। उसने सोचा कि उसी ने उस पर पत्थर फेंका होगा। उसने उस पर जोर से पत्थर मारा। पत्थर लगते ही बगुला नीचे गिरा और मर गया।

वेनिस का व्यापारी

वेनिस नगर में शैलोक नाम का एक यहूदी रहा करता था। वह सूद का व्यापार किया करता था। इसाई व्यापारियों को कर्ज देकर उसने सूद के रूप में बहुत-सा पैसा कमाया। क्यों कि सूद वसूल करने में, वह किसी प्रकार की दया-दाक्षिण्य न दिखाता था, इसलिए उससे लोग चिढ़े रहते। शैलोक के शत्रु ही शत्रु थे। कोई मित्र न था।

वेनिस नगर में ही, अन्टोनियो नाम का एक व्यापारी रहा करता था, यह शैलोक का जानी दुश्मन था। वह शैलोक के लिए बगल में कांटा-सा था। वह युवक था। सहृदय था। स्नेह-पात्र था। जो कोई मुसीबत में होता, उसको बिना सूद के ही वह पैसा देता। जब व्यापारियों के समूह में ये दोनों मिलते तो अन्टोनियो, शैलोक की पोल खोला करता। अन्टोनियो से बदला लेने के लिए, शैलोक बहुत दिनों से मौके की प्रतीक्षा कर रहा था।

वेनिस नगरवासियों को जितनी घृणा शैलोक से थी उतना ही प्रेम अन्टोनियो से था। उसके बहुत-से मित्र थे। उन सब में सबसे अधिक विश्वासपात्र बसोनियो नाम का नौजवान था। वह बड़े खानदान का था। उसके पिताने उसको बहुत कम सम्पत्ति दी थी। उसको भी उसने जल्दी खर्च कर दिया। उसके पास यद्यपि धन न रह गया था पर पुरानी आदतें वह छोड़ न पाता था। सम्पत्ति के खतम हो जाने के बाद, बसोनियो कुछ दिनों तक अन्टोनियो की मदद पर ही जीता रहा।

परन्तु, बसोनियो के गरीबी के दिन लदनेवाले थे क्योंकि उसने एक अमीर

घर की लड़की से प्रेम किया और उससे विवाह करने को भी उसे अवकाश मिला। उस लड़की का नाम पोर्शिया था। उसके पिता ने मरते समय सारी जमीन जायदाद अपनी लड़की के नाम लिख दी थी। वह वेनिस नगर के समीप बेल्मोन्ट गाँव में रह रही थी।

पोर्शिया का पिता जब जीवित था तभी बसोनिया अक्सर बेल्मोन्ट आया जाया करता। बसोनियो को विश्वास था कि पोर्शिया उससे प्रेम कर रही थी। पिता की मृत्यु के कारण उसको शादी करनी पड़ती। इसलिये उससे विवाह के बारे में कहने के लिए बसोनियो ने बेल्मोन्ट जाने का निश्चय किया।

पर दुल्हा की तरह सजधज कर जाने के लिए बसोनियो के पास धन न था। इसलिये वह अपने दोस्त अन्टोनियो के पास गया। उसने उससे तीन हजार ड्यूकीट कर्ज माँगे।

दुर्भाग्य से उस समय, अन्टोनियो के पास इतना धन न था। वह अपने जहाजों की, जो समुद्र पार से माल ला रहे थे, प्रतीक्षा कर रहा था। जब तक वे न पहुँचते उसके हाथ में पैसा न आता।

इसलिए वह अपने मित्र को लेकर शैलोक के पास गया। —"मेरे जहाजों के आते ही मैं तुम्हें तुम्हारा कर्ज वापिस कर दूँगा। मुझे तीन हजार ड्यूकीट उधार दो।"

शैलोक ने सोचा कि बदला लेने के लिए वह अच्छा मौका था। उसने कहा—"जी, आपने मुझे कई बार कुत्ता कह कर सम्बोधित किया। कई बार डाँटा धमका। क्या उसकी कृतज्ञता के रूप में तीन हजार ड्यूकीट उधार लेने आये हैं! कुत्ते के पास उधार देने के लिए भला तीन हजार ड्युकीट कहाँ होंगे!"

"उसका और इसका क्या सम्बन्ध है—जरूरत हुई तो मैं फिर तुम्हें डाँटूंगा। मजाक उड़ाऊँगा। मैं तुम से मित्र के नाते उधार नहीं माँग रहा हूँ। शत्रु मानकर ही दो। मय सूद के अपना पैसा वसूल कर लेना।" अन्टोनियो ने कहा।

"क्यों आप यों गरम होते हैं! मुझे तो आपका स्नेह चाहिये। आपने जो कुछ कहा वह सब भूल जाता हूँ। आपको जितना पैसा चाहिये वह दूँगा। आप से सूद भी न लूँगा।" शैलोक ने कहा। यह बातें सुनकर अन्टोनियो को अचरज हुआ।

"आप तीन हजार ड्युकीट ले लीजिए.... वकील से दस्तावेज लिखवा लीजिए.... मुझे सूद बूद कुछ नहीं चाहिये....बस यह लिख दो कि फलाने दिन तक यदि पैसा वापिस न दिया....तो मैं अपने शरीर में से एक सेर माँस दूँगा....यह तो मैं यूँहि कह रहा हूँ....मेरा मतलब यह नहीं है कि आप पैसा वापिस न दे सकेंगे।" शैलोक ने बड़ा प्रेम दिखाते हुए कहा।

"खैर....मुझे कोई एतराज नहीं है। मैं नहीं जानता था कि तुम इतने अच्छे हो....मैं इस तरह लिखे गये

दस्तावेज़ पर दस्तखत करूँगा।" अन्टोनियो ने कहा।

बसोनियो को अन्टोनियो का इस शर्त पर उधार लेना बिल्कुल न जँचा। उसने इस पर आपत्ति उठाई।

"जो मैंने समय दिया है....तब तक मेरे जहाज वापिस आ जायेंगे। घबराओ मत।" अन्टोनियो ने कहा।

उसकी बातचीत सुनकर शैलोक ने कहा—"अरे, अरे, आप लोग भी कितना सन्देह करते हैं! क्या सारी दुनियाँ आप जैसी है—मैं सेर भर माँस लेकर क्या करूँगा!—मैंने तो उनका स्नेह पाने के लिए दस्तावेज़ लिखवाया है....अगर आप को सन्देह हो तो पैसा मत लीजिये।

शैलोक की बातों से बसोनियो का सन्देह कुछ भी कम न हुआ। उसके बहुत मना करने पर भी अन्टोनियो ने उस यहूदी के पास से पैसा लिया और उसकी इच्छानुसार उसके दस्तावेज़ पर दस्तखत भी कर दिये।

वह पैसा लेकर बसोनिया, कुछ नौकर चाकर इकठ्ठे करके ग्रापियो नाम के एक साथी को लेकर पोर्शिया के घर गया।

उसने पोर्शिया से कहा कि वह निर्धन था। पर उत्तम वंश का था। पोर्शिया ने तो उसके स्वभाव-गुणों से प्रेम किया था.... न कि उसके रुपये-पैसे से। उसके पास तो अपना बहुत-सा धन था ही।

उसने सविनय कहा—"आपकी पत्नी होने के योग्य बनने के लिए मैं दस गुना अधिक धनी क्यों नहीं हो जाती? दस गुना खूबसूरत क्यों नहीं हो जाती? मैं आपके लिए काफी शिक्षित नहीं हूँ। फिर भी मुझे आशा है कि आप मेरी कमियों को पूरा कर सकेंगे।"

पोर्शिया ने बसोनिया से विवाह करने की स्वीकृति सूचित करते हुए अपनी अंगूठी निकालकर उसको दी। आनन्दित हो बसोनिया ने प्रतिज्ञा की कि किसी भी हालत में उस अंगूठी को वह किसी और को न देगा।

एक तरफ़ तो बसोनिया का पोर्शिया से विवाह निश्चित हो रहा था, और दूसरी तरफ़ बसोनियो के साथी ग्रापियो का, पोर्शिया की सहेली—नेरिस्सा नाम की लड़की से विवाह तय हुआ। नेरिस्सा ने भी ग्रापियो को एक अंगूठी देकर, उससे प्रतिज्ञा करवाई कि वह किसी और को वह न देगा।

जब दोनों विवाह होनेवाले थे तो वेनिस से एक दुःखद वार्ता आई। अन्टोनियो के आदमी ने आकर बसोनियो को एक चिट्ठी दी। उस चिट्ठी में यह लिखा था। "प्रिय बसोनियो, मेरे सब जहाज़ समुद्र में डूब गये हैं। और जो अवधि मैंने दस्तावेज़ में लिखी थी, वह भी समाप्त हो गई है। मुझे कर्ज़ चुकाने के लिए अपने प्राण छोड़ने पड़ेंगे। मैं यह चाहता हूँ कि अन्तिम घड़ी में तुम मेरे

पास रहो। परन्तु यह जरूरी न समझो। तभी आओ जब तुम्हारी पत्नी तुम्हें आने के लिए अनुमति दे दे।"

चिट्ठी पढ़कर बसोनियो को दुःखित पा पोर्शिया ने सोचा कि उसका कोई समीप का बन्धु मर मरा गया था। अन्टोनियो की चिट्ठी पढ़ने के बाद उसने बसोनियो से कहा—"एक क्षण भी आप देर न कीजिये अपने मित्र के पास तुरत जाइये।"

उसने तुरत पुरोहित को बुलवाकर अपना विवाह सम्पन्न किया। ऐसा करने से ही बसोनियो को पोर्शिया की सम्पत्ति पर अधिकार मिलता था। पोर्शिया और बसोनियो के विवाह के साथ, नेरिस्सा और ग्रापियो का विवाह भी हो गया। विवाह समाप्त होते ही बसोनियो अपने साथी को लेकर वेनिस पहुँचा।

अन्टोनियो को कैद में डाल दिया गया था। अगले दिन ही वेनिस के राजा के यहाँ सुनवाई थी। बसोनियो ने शैलोक के पास जाकर कहा कि अन्टोनियो का कर्ज वह चुका देगा। "अवधि समाप्त हो गई है मुझे पैसा नहीं चाहिये।" शैलोक ने कहा।

बसोनियो के चले जाने के बाद, पोर्शिया हाथ पर हाथ रखकर न बैठी रही। उसने अन्टोनियो को छुड़वाने का निश्चय किया। वेनिस नगर में उसका एक सम्बन्धी वकील रहा करता था। उसका नाम बेलोरियो था। पोर्शिया अपनी सहेली को लेकर उसके पास गई। उसने अन्टोनियो का मामला बताकर उसकी सलाह माँगी। बेलोरियो ने बताया भी कि उसे क्या करना चाहिये था।

फिर पोर्शिया ने वकील के कपड़े पहिने, आदमी का वेष धारण किया, और अपनी सहेली को गुमाश्ता बनाया। दोनों

मिलकर अन्टोनियो की सुनवाई में हाज़िर हुए। वेलोरियो के पास से वह राजा के नाम एक चिट्ठी लाई थी। वेलोरियो ने लिखा था कि वह अन्टोनियो की वकालत करना चाहता था। परन्तु तबियत ठीक न होने के कारण वह अपने बदले एक नौजवान वकील को भेज रहा था। राजा इसकेलिए मान गया।

मुकद्मा शुरु हुआ। बसोनियो वहीं था, पर उसने अपनी पत्नी को नहीं पहिचाना। पोर्शिया ने उठकर शैलोक से कहा—"अन्टोनियो के वचन के अनुसार तुम्हें उसका शरीर काटकर हरजाना लेने का ही हक है। परन्तु वह सज्जनों का काम नहीं है। राजा महाराज भी राज्य नहीं कर सकते, अगर उनमें दया न हो। इसलिए तुम हरजाने के लिए हठ न करो। तुम्हें जितना पैसा मिलना है उससे दुगना माँगो या तिगुना माँगो।"

"मैं यही चाहता हूँ कि इस दस्तावेज के मुताबिक सब कुछ हो।" शैलोक ने कहा।

"अगर तुम यही चाहते हो तो तुम अपना सेर भर माँस ले लो। तुम अन्टोनियो

के किसी भाग से भी यह मौस ले सकते हो।" पोर्शिया ने कहा।

शैलोक खुश हो छुरी लेकर तेज करने लगा। अन्टोनियो ने सोचा कि उसकी मौत नजदीक आ गई थी। उसने बसोनियो से विदा लेते हुए कहा—"तुम यह न सोचना कि मैं तुम्हारी वजह से मर रहा हूँ। तुम अपनी पत्नी को बताना कि मैंने तुम्हें कितना प्रेम किया था।"

शैलोक अन्टोनियो से बदला लेने के लिए उतावला हो रहा था। "सेर भर मौस तोलने के लिए क्या तराजू तैयार है! कहीं अन्टोनियो रक्तस्राव से मर न जाये। इसलिए तुम वैद्य को बुलाओ।" पोर्शिया ने कहा।

"यह बात तो उस दस्तावेज़ में नहीं है।" शैलोक ने कहा। वह यही चाहता था कि अन्टोनियो मर जाये।

"अच्छा, तुम अपना सेर मौस ले लो। इस पर न कानून को आपत्ति है न अदालत को ही।" पोर्शिया ने कहा। शैलोक खुशी खुशी छुरी लेकर अन्टोनियो के पास गया।

"जरा ठहरो। यह भी तो सोचो। शर्त के अनुसार तुम सेर भर ही मौस ले

सेर भर माँस तो अलग एक छटांक भी लेना सम्भव न था।

"अच्छा तो मेरा पैसा मुझे दिलवा दीजिये।" शैलोक ने कहा।

"अभी दे देता हूँ।" बसोनियो आनन्द से चिल्लाया।

"यह नहीं होगा। फ़रियादी ने अपना हरजाना ही माँगा था। अदालत उनको हरजाना दिलवादेगी। शैलोक तुम अपना सेर भर माँस ले लो। देखना ठीक एक सेर माँस ही लेना। अगर एक रत्ती भी अधिक या कम लिया तो तुम्हें दंड मिलेगा।" पोर्शिया ने कहा।

अदालत में सबने उसके प्रति अपनी घृणा व्यक्त की। शैलोक का अपमान हुआ। वह जान बचाकर अदालत से चला गया। अन्टोनियो को छोड़ दिया गया। वेनिस के राजा ने पोर्शिया की योग्यता की प्रशंसा कर उसको अपने घर न्योता दिया। पर उसने उनका निमन्त्रण यह कहकर टाल दिया कि उसे ज़रूरी काम था।

अपने मित्र के प्राणों को बचानेवाले वकील को बसोनियो ने रुपया देना चाहा। परन्तु पोर्शिया ने रुपया लेने से इनकार

सकते हो। अन्टोनियो का एक बून्द भी खून तुम नहीं ले सकते। इस दस्तावेज में खून का कहीं जिक्र ही नहीं है। अन्टोनियो का माँस लेते समय अगर कहीं एक बून्द भी खून गिरा तो तुम पर हत्या का इल्जाम लगेगा और तुम अपनी सारी सम्पत्ति खो बैठोगे। दण्ड मिलेगा।" पोर्शिया ने कहा।

शैलोक हैरान हो खड़ा हो गया। अदालत में सब तालियाँ पीटने लगे। शैलोक अपने गढ़े में आप ही गिर रहा था। बिना खून बहाये, शैलोक के लिए

कर दिया। उसने उससे (अपनी दी हुई) अंगूठी माँगी ताकि उसकी याद हमेशा बनी रहे। यह जानकर भी कि उससे उसकी पत्नी का अपकार होगा, बसोनिया अंगूठी दिये बगैर न रह सका। उसी तरह गुमश्ता के वेष में नेरिस्सा ने अपने पति के पास से अपनी अंगूठी इनाम में ले ली। फिर पोर्शिया और नेरिस्सा बेल्मोन्ट वापिस चले गये। वे मामूली कपड़े पहिनकर अपने पतियों की इन्तजार करने लगीं।

थोड़ी देर बाद, बसोनियो, अन्टोनियो और ग्राशियो वहाँ आये। बसोनियो ने अपने मित्र का परिचय कराया। वह अदालत की कार्यवाही उसे बताने लगा।

इस बीच नेरिस्सा, ग्राषियो झगड़ा करने लगे। "मेरी अंगूठी किसको दी है:...बता।"

पोर्शिया ने पूछा—"क्यों यों झगड़ रहे हो?"

"देखिये, मुझे एक मामूली अंगूठी के लिए कितना तंग कर रही है।" ग्रापियो ने कहा।

"—यह मामूली अंगूठी है! तुमने आज सवेरे ही तो प्रतिज्ञा की थी

कि उसे किसी को न दोगे।" नेरिस्सा ने कहा।

"अन्टोनियो की रक्षा करनेवाले वकील के गुमाश्ता ने इसको लेने के लिए जिद की। मैंने दे दी। इस में क्या खराबी है?" ग्रापियो ने कहा।

"हाँ, खराबी है। मैंने अपने पति को अंगूठी दी थी। वे किसी भी हालत में, उसे किसी और को न देंगे। चाहो तो उनसे पूछो।" पोर्षिया ने ग्रापियो से कहा।

"वाह, उसने भी अपनी अंगूठी उस वकील को दे दी है। चाहे तो आप खुद पूछकर देखिये।" ग्रापियो ने कहा।

पोर्शिया ने बसोनियो पर क्रोध का अभिनय किया। उसको जली कटी भी सुनाई।

यह सब देख कर अन्टोनियो ने कहा—"मैं भी कितना मनहूस हूँ। मेरे कारण ही तो तुम यों झगड़ रहे हो।"

"कम से कम आगे फिर यह न करना। जो हो गया, सो हो गया। आगे के लिए आप अपने मित्रों को आगाह कर दीजिये।"—कहते हुये पोर्षिया ने अपनी अंगूठी अन्टोनियो को दी।

उस अंगूठी को बसोनियो लेकर अचरज करने लगा। फिर पोर्शिया ने सच बता दिया। यह जानकर कि अन्टोनियो की वकालत पोर्शिया ने ही की थी अन्टोनियो, बसोनियो बहुत चकित हुये। उस खुशी के मौके पर एक और खुश खबरी मिली। वे जहाज, जिनके बारे में कहा गया था कि समुद्र में डूब गये थे, माल लेकर बन्दरगाह में पहुँच गये थे।

लब्धप्रणाशम्

कहा मगर ने—"बन्धु, करो मत
अब तुम ज्यादा सोच-विचार,
सागर के उस पार हमारा
है धरती पर ही घर-बार।

बिठा पीठ पर अपने तुमको
ले जाऊँगा मैं उस पार,
लोगे ही तुम देख कि भाभी
तुमको करती कितना प्यार!"

कथन मगर का सुन यह बन्दर
कर न सका ज्यादा इनकार,
मगर पीठ पर बिठा उसे तब
आ पहुँचा जल्दी मँझधार।

बन्दर को लख बहुत भीत औ'
समझ उसे बिलकुल लाचार,
कहा मगर ने—"घड़ी अन्त की
आयी अब है तेरी यार।

अभी हृदय तेरा खाएगी
भाभी तेरी लेकर स्वाद,
इसीलिए लाया हूँ तुमको
कर ले तू अब प्रभु को याद!"

बन्दर यह सुन घबड़ाया, पर
लिया बुद्धि से उसने काम,
कहा—"मित्र, तुमने क्यों पहले
लिया नहीं इसका था नाम?

मैं तो अपना हृदय समूचा
आया उसी पेड़ पर टाँग,
कहते यदि पहले तो पूरी
करता ही भाभी की माँग।

मुझे खुशी ही होती उससे
आता यदि वह उनके काम,
व्यर्थ पड़ा ही वह रहता है
कभी न आता मेरे काम।"

"श्री भारतीभक्त"

कहा मगर ने यह सुनकर तब
"अगर यही सचमुच है बात,
तो ले चलता तुझे किनारे
ले आ अपना दिल भी साथ।"

पास किनारे के आते ही
मारी लम्बी एक छलाँग,
और पेड़ पर चढ़कर बोला—
"धूर्त, मित्र का कर मत स्वाँग!"

मगर मूर्खता पर अपनी तब
मन ही मन पछताया'
अपनी ही करनी से उसका
बिगड़ा किया कराया।

फिर भी मन के भाव छिपाकर
बोला—"मित्र, न हो नाराज़,
झूठमूठ ही कुछ यों कहकर
जाँच रहा था तुमको आज।"

बन्दर बोला—"भाग यहाँ से
तू है कपटी लोभी क्रूर,
मित्र नहीं अब से तू मेरा,
सदा रहूँगा तुझसे दूर।"

कहा मगर ने—"हँसी हँसी में
मैंने जो कह दी कुछ बात,
उसे भूलकर चलो साथ अब
वरना हो जाएगी रात।"

बन्दर गुस्से से तब बोला—
"तेरा क्या हो अब विश्वास?
गंगदत्त-सा ही न कभी फिर
आऊँगा खतरे के पास।

एक कूप के मेंढक-दल का
गंगदत्त ही था सरदार,
तंग कई रिश्तेदारों से
आकर उसने किया विचार—

किसी तरह भी इन दुष्टों से
पाना ही अब निस्तार,
चाहे कोई भी आ करके
इनको दे चुन-चुनकर मार।

यही सोच वह बाहर आया
चढ़कर रहट-चक्र की राह,
एक नाग से मैत्री करके
जतलायी उसको निज चाह।

कुलघाती की बातें सुनकर
नाग हुआ झटपट तैयार,
उतर कूप में उसी राह से
किया शुरु मेंढक संहार।

गंगदत्त के शत्रु सभी अब
बने नाग के क्रमशः ग्रास,
तब ली गंगदत्त ने आखिर
कहीं चैन की जाकर साँस।

उसने कहा नाग से तत्क्षण
'मित्र, मानता हूँ आभार,
अब जाओ तुम लौट गेह को
किया बहुत तुमने उपकार।'

किन्तु नाग ने बात न मानी
वहीं दिया डेरा निज डाल,
गंगदत्त के परिजन-मित्रों
का भी बना शीघ्र वह काल।

गंगदत्त बच रहा अकेला
सोची आखिर उसने चाल,
मेंढक और फँसा लाने को
दिया नाग ने उसे निकाल।
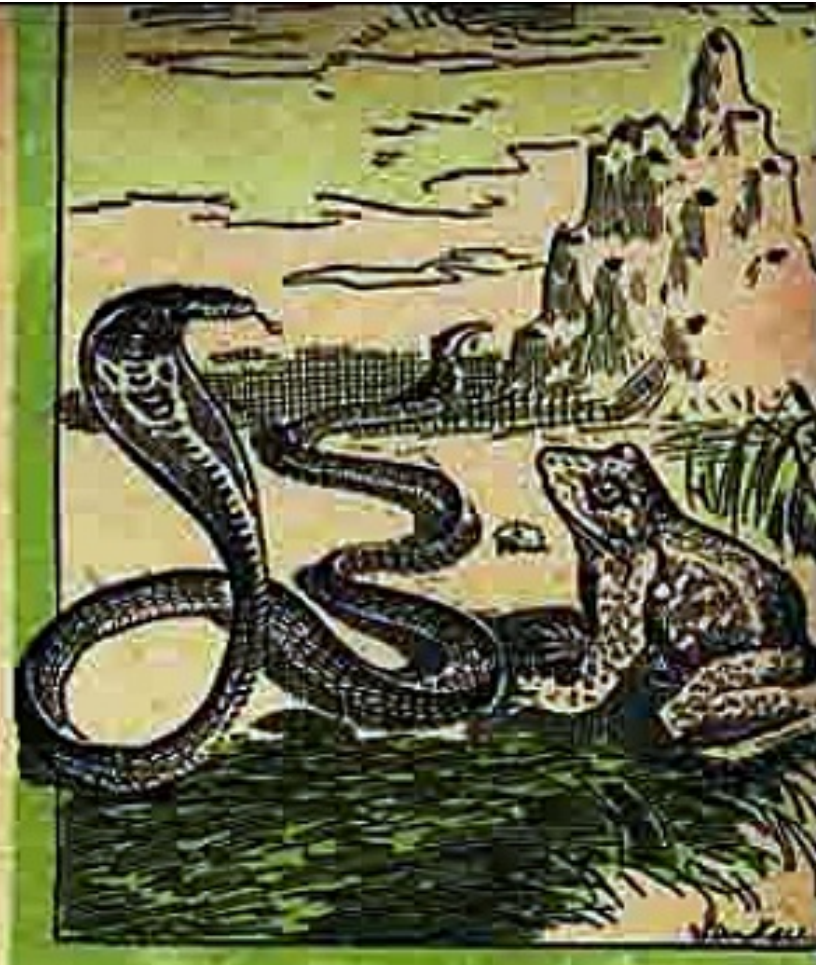
फिर न कभी वह वापस लौटा
रहा कूप में केवल नाग,
गंगदत्त कहते कहते यह
गया वहाँ से जल्दी भाग—

'नहीं कूप में लौटूँगा अब
क्यों जाऊँ फिर उसके पास,
भूला है वह नाग बहुत ही
उसका हो कैसे विश्वास?'

गंगदत्त की भाँति मुझे भी
रहना है तुमसे हुशियार,
लम्बकर्ण-सा मूर्ख नहीं जो
खतरे का न करूँ विचार!

वन का राजा सिंह एक था
सेवक उसका एक सियार,
एक बार हाथी से लड़ते
गहरे घाव लगे दो-चार।

सिंह न इससे चल ही पाता
औ' कर पाता नहीं शिकार,
मालिक के ही साथ-साथ वह
भूखा रहने लगा सियार।

क्षुधा-विकल हो कहा सिंह ने—
'ढूंढो ऐसा एक शिकार,
इस हालत में भी जिसको मैं
सकूँ यहाँ पर ही अब मार!'

बहुत खोजने पर सियार को
दिखा कहीं पर गदहा एक
लम्बकर्ण था नाम उसीका
जिसको जल्दी माथा टेक

किया सियार ने नमस्कार औ'
बोला—'मामा, यह क्या हाल?
बहुत दिनों के बाद दिखे हो
लेकिन लगते हो कंकाल!'

गदहा बोला—'भांजे मेरे,
कहूँ तुम्हें क्या अपना हाल,
धोबी निर्दय सता-सताकर
करता रहता है बेहाल।'

सियार तब यह सुनकर बोला—
'अगर यही है सचमुच बात,
तो फिर रहकर व्यर्थ यहाँ क्यों
सुखा रहे हो अपना गात?'

चलो वहाँ पर जहाँ नदी है
और बहुत मोटी है घास,
यह सूखी-सी जगह छोड़कर
क्यों न वहीं करते हो वास?'

लम्बकर्ण यह सुनकर बोला—
'कैसे मैं जाऊँ उस ठौर?
वन में हिंस्रक पशु हैं रहते
बन जाऊँगा उनका कौर!'

राहगीर दुल्हा

विक्रमार्क तो हार मानना जानता ही न था। वह फिर पेड़ के पास गया, शव को उतार कर, कन्धे पर डालकर श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा! एक भिखारी के कहने मात्र से इतना कष्ट उठा रहे हो। तुम्हारे निरहंकार के बारे में तो कहना ही क्या! प्रायः क्षत्रियों में बहुत अभिमान होता है। इसका दृष्टान्त दुर्जय की पत्नी, जाम्बवती है। जाम्बवती की लड़की, माधुरी की बड़े अजीब ढँग से शादी हुई। वह बताता हूँ, सुनो।" उसने यों कहानी शुरू की।

कभी, चालुक्य और कलिंगों में एक महायुद्ध हुआ। उस युद्ध में दोनों तरफ के कई वीर योद्धा मारे गये। परन्तु विजय किसी भी पक्ष की नहीं हुई। दोनों

बेताल कथाएँ

में पारस्परिक द्वेष बढ़ता गया। युद्ध में मारे गये वीरों में दुर्जय भी था। वह राजवंश से सम्बन्धित था। परन्तु बहुत दिन पहिले ही उसका राज्य चला गया था। वह खानदानी आदमी की तरह जिया। जंगल में एक महल बनवाकर, उसमें अपने परिवार के साथ वह रहा करता था। न उसका न उसके परिवार का ही औरों से अधिक सम्बन्ध था। राज्य चले गये थे। पर उनमें तब भी राजाओं का अभिमान था।

युद्ध में दुर्जय के मारे जाने के बाद उसकी पत्नी बड़ी अक्लमन्दी से परिवार चला रही थी। उसके एक लड़की थी, माधुरी। दुर्जय वंश पर एक शाप था—उस वंश में जन्म लेनेवाली लड़कियों का, अठारहवाँ वर्ष पूरा होने से पहिले विवाह हो जाना चाहिये, नहीं तो वे उन्नीसवें जन्म दिवस पर मर जायेंगी। पिछली पाँच छः पीढ़ियों में दो कन्यायें इसी तरह मर गई थीं। ठीक समय पर उनको उचित सम्बन्ध न मिलने पर ही वे मर गई थीं।

माधुरी का अठारहवाँ वर्ष चल रहा था। पर उसे शाप का भय न था, क्योंकि उसका पति पहिले ही निश्चित हो चुका था। उसका नाम विरूपाक्ष था। उसकी तीस वर्ष की उम्र थी। वह बहुत ही साहसी, बलवान और वीर था। वह भी दुर्जय की तरह राजवंश से सम्बन्धित था। माधुरी देखने में जितनी भोली भाली थी, उतना ही विरूपाक्ष कठोर-सा था। फिर भी वह छुटपन से ही माधुरी पर जान देता आया था।

जाम्बवती की दृष्टि में विरूपाक्ष ही उसकी लड़की के लिए हर तरह से उपयुक्त पति था, क्योंकि कुल में या गुण में उसकी बराबरी करनेवाला कोई न था।

यही नहीं, वह दुर्जय के परिवार की भी रक्षा करता और जाम्बवती के अधिकारों पर आँच नहीं पड़ने देता।

परन्तु माधुरी को बचपन से न जाने क्यों विरूपाक्ष से भय था। जब वह पास आता, तो दूसरी तरफ़ देखने लगती। जब उसकी आवाज़ सुनती तो उसे लगता जैसे बिजली का गर्जन सुन रही हो। वह बड़े प्रेम से कुशल-प्रश्न पूछता। पर वह उत्तर देते देते काँपती। माँ के निरन्तर कहने पर, उसे भी विश्वास हो गया कि विरूपाक्ष से अच्छा पति न मिल सकता था।

कल—अठारहवाँ वर्ष पूरा होता था कि उसके विवाह की व्यवस्था होने लगी। रात को मुहूर्त था। माधुरी को दुल्हिन बनाया गया। घर सजाया गया। बरातियों की प्रतीक्षा की जा रही थी।

सूर्यास्त तक भी बराती न आये....जब कि उन्हें आ जाना चाहिए था। जाम्बवती घबराने लगी। काफ़ी अन्धेरा हो जाने के बाद, विरूपाक्ष के बारे में खबर मिली। वह विवाह के लिए निकला ही था कि कोई शत्रु आया, उससे उसका द्वन्द्व-युद्ध

हुआ और उस युद्ध में विरूपाक्ष घायल होकर मर गया।

यह दुःख खबरी सुनते ही जाम्बवती की मानों रीढ़ ही टूट गई। और कभी यह खबर मिलती तो वह बहुत दुःखी हुई होती। अब उसके पास दुःखी होने के लिए भी समय न था। अगर दो चार घंटे में लड़की की शादी न हुई तो सवेरा होने से पहले उसकी मृत्यु होकर रहेगी।

उस आपत्ति से बचने के लिए उसे एक ही उपाय सूझा—रास्ते में किसी आने जाने वाले से, मुहूर्त पर माधुरी

की शादी करना ही। बाकी सब भगवान की इच्छा थी।

जाम्बवती ने पति की बहिन को बुलाकर कहा—"तुम बड़ी हो, अनुभवी हो, सूझबूझवाली हो। एक काला कम्बल ओढ़कर, ताकि किसी को कुछ न मालूम हो, रास्ते के बगल में खड़ी हो जाओ—रास्ते में जाते किसी युवक को देखकर, जो हमारी लड़की के लिए, भले ही थोड़ा बहुत ही योग्य हो, बिना कुछ कहे, उसे ले आओ। नहीं तो लड़की हमारी नहीं रहेगी।"

दुर्जय की बड़ी बहिन बहुत कामकाजी थी। वह उस अन्धेरे में जंगल में से होती हुई रास्ते पर पहुँची। तभी चन्द्रोदय हो रहा था।

वह रास्ते के पास बहुत देर तक खड़ी रही। परन्तु कोई भी उस तरफ़ न आया। वह सोच रही थी कि शायद कोई न आये और माधुरी जिन्दा न रहे कि घोड़े के आने की ध्वनि सुनाई दी। थोड़ी देर बाद एक युवक घोड़े पर सवार हो आता दिखाई दिया।

उस चान्दनी में, थोड़ी दूर पर ही वह सवार था कि बुढ़िया जान गई कि वह युवक पच्चीस वर्ष से अधिक न था। वह अच्छे वंश का था। माधुरी के लिए किसी प्रकार भी वह अनुपयुक्त न था। उसको रोकने के लिए वह रास्ते के बीचों बीच खड़ी हो गई।

घोड़े पर जो आदमी चला आ रहा था, उसका नाम था कान्तिवर्मा। वह कलिंग देश का था। उसकी भी बहुत-सी जमीन जायदाद थी। उसने बहुत दिनों तक शादी के लिए कोशिश की—परन्तु ठीक लड़की कहीं न मिली। वह किसी लड़की से शादी करके घरबार बसाना चाहता था। इसीलिए कृष्णा नदी के किनारे जा रहा था। वहाँ उसके पिता का एक मित्र था। वह उसकी लड़की से विवाह करना चाहता था। उस लड़की से उसे प्रेम न था। जब बिना प्रेम के विवाह करना ही था तो किसी भी लड़की से शादी की जा सकती थी।

रास्ते में किसी को देख उसने लगाम खींची। घोड़ा रुका। बुढ़िया ने उसके पास जाकर कहा—"भगवान ने तुम्हें भेजा है। क्या तुम मेरे साथ आ सकोगे?"

कान्तिवर्मा जान गया कि वह स्त्री थी और बुढ़िया थी। उसने पूछा—"कहाँ! क्या काम है!"

"वह सब बताने लगूँ तो मुहूर्त निकल जायेगा। अगर डरपोक न हो तो मेरे साथ आओ। तुम्हारा कोई अशुभ न होगा।" कहती हुई बुढ़िया जंगल में रास्ता दिखाने लगी। कान्तिवर्मा बिल्कुल न डरा। और तो और उसका कुतूहल जगा। शायद उसे कोई नया अनुभव होने जा रहा था। घोड़े से उतरकर उसको चलाता, वह बुढ़िया के पीछे-पीछे चला।

दोनों थोड़ी देर में घर पहुँचे। घर को सजा था, कान्तिवर्मा ने सोचा कि शायद कोई शादी वगैरह हो रही थी।

जाम्बवती ने उसे देखकर कहा—"अच्छा है। मैंने न सोचा था कि ऐसा भी आदमी मिलेगा।"

कान्तिवर्मा कुछ झुंझलाया। "मुझसे किसी ने न कहा कि काम क्या है!"

"बेटा, मेरी एक ही लड़की है। वह सवेरे होते जिन्दी न रहेगी। मैं किस आफत में हूँ यह तुम अनुमान कर सकते हो। मेरी लड़की को देखोगे तो मेरे दुःख तुम और अच्छी तरह समझ सकोगे।" जाम्बवती ने कहा।

कान्तिवर्मा को कुछ समझ में न आ रहा था। जाम्बवती के साथ जाकर, दीयों की चम-चमाती रोशनी में चमकती माधुरी को देखा। उसने उतनी सुन्दर स्त्री की कभी कल्पना भी न की थी! वह उसे अप्सरा-सी लगी।

"क्या यह वही लड़की है!" कान्तिवर्मा ने पूछा।

"हाँ बेटा, तुम जान सकते हो कि मेरी क्या हालत हो सकती है, जब

यह सवेरे लाश होने जा रही हो।" जाम्बवती ने कहा।

वह पूछनेवाला ही था कि उसे क्या बीमारी है कि माधुरी ने उसकी ओर देखा। तुरत उसके आँखो में कुछ कौंधा, वे लाल पड़ गईं। जबसे होश सम्भाला था—तबसे वह पति के रूप में विरूपाक्ष की कल्पना करती आई थी। उसके मर जाने के बाद, जब उसे मालूम हुआ कि किसी रास्ते जाते से उसका विवाह कर दिया जायेगा तो उसने उससे भी बदसूरत आदमी की कल्पना की थी। इसी कारण उसकी आँखों को कान्तिवर्मा मन्मथ-सा लगा।

कुछ भी हो, कान्तिवर्मा और माधुरी को एक दूसरे को देखकर प्रेम हो गया। कान्तिवर्मा कुछ पूछनेवाला ही था कि पुरोहित ने आगे बढ़कर कहा—"जाम्बवती देवी, आलस्य हुआ तो मुहूर्त निकल जायेगा।"

"मेरी तरफ़ से कोई देरी नहीं है।" जाम्बवती ने कहा।

माधुरी और कान्तिवर्मा को बिठाया गया और तुरत उनकी शादी कर दी गई। कान्तिवर्मा, ऐसी बात नहीं, कि स्वाभिमानी न था। उससे किसी ने न पूछा—"क्या इस लड़की से शादी करोगे? मामूली नौकर को जिस तरह आज्ञा दी जाती है, उसे भी दी गई—"इन कपड़ों को पहिनो, वहाँ बैठो।" माधुरी के लिए उसमें जो प्रेम पैदा हो गया था, उसके लिए ही उसने वह सब कुछ सह लिया। यह बात साफ़ थी कि माधुरी उससे प्रेम कर रही थी।—जब वे विवाह वेदि पर थे, तो उसने उसकी ओर कई बार देखा, वह मुस्कराई। सिर झुका लिया।

विवाह के बाद सब भोजन के लिए बैठे। तब जाम्बवती ने अपने दामाद के

कुल-गोत्र के बारे में पूछा। जब उसे मालूम हुआ कि यह कलिंग देश का था तो उसे कुछ बुरा लगा। उसका पिता भीरवर्मा कलिंग और चालुक्य के युद्ध में कलिंगों की ओर से लड़ा था। और युद्ध में वह मारा गया था। उसे जब यह मालूम हुआ तो वह स्वयं मर-सी गई।

"क्या अन्याय है! कितना भयंकर। मेरे पति को, हो सकता है, युद्ध-क्षेत्र में तेरे पिता ने ही मारा हो। तुम्हारी जाति हमारी शत्रु है। शादी जो हुई सो हुई। अपनी लड़की की जान बचाने के लिए मैं किसी बटोही से ही उसकी शादी कर देती, पर मैं उसको ससुराल न भेजूँगी। उसका मर जाना ही तेरे साथ गृहस्थी निभाने से कहीं अच्छा है। विवाह यहीं खतम होगया, समझो। भोजन के बाद तुम अपना रास्ता पकड़ो।" जाम्बवती ने कान्तिवर्मा से कहा।

शायद कान्तिवर्मा गरमा गरम उत्तर देता, पर माधुरी की आँखों में आँसू देखकर उसने कहा—"सासजी, आपने जो कहा, मैंने किया। इसलिए आप

शायद मुझे निकम्मा समझ रही हैं। मैं अपनी पत्नी को साथ ले जाऊँगा। इस विषय में आप सन्देह न कीजिये।"

इस बीच वहाँ लड़खड़ाता लड़खड़ाता एक हट्टा-कट्टा आदमी आया। उसके कपड़े खून से लथपथ थे। उसको देखते ही जाम्बवती ने कहा—"विरूपा! जिन्दे हो? अब तक कहाँ थे बेटा! समय पर तुम थे नहीं, इसलिए निष्कारण लड़की का गला घोंटना पड़ा।" कहते हुए उस विरूपाक्ष को, जो कुछ गुज़रा था, जाम्बवती ने कह सुनाया।

विरूपाक्ष ने सब सुनकर कहा—"दुष्ट कहीं का! जिस लड़की से मैं विवाह करना चाहता था, उसे तुम ले जाओगे! देख, तेरी खबर लेता हूँ।" उसने तलवार निकाली।

कान्तिवर्मा ने एक बार माधुरी की ओर देखा। उसे विरूपाक्ष की ओर देखकर डरता पा उसे खुशी हुई। उसने विरूपाक्ष से कहा—"मैंने किसी की कोई लड़की नहीं ली है। बिना मेरी अनुमति पाये, मुझे रास्ते से ये लाये और इससे शादी करा दी। मैंने उसे प्रेम किया है। लगता है कि वह भी मुझ से प्रेम करती है।

यह सुनते ही जाम्बवती ने कान्तिवर्मा को जली कटी सुनाई। "कलिंग सब बुज़दिल हैं। दुर्जय की लड़की, बुज़दिल के साथ गृहस्थी न चलायेगी" उसने कहा।

आखिर कान्तिवर्मा खाता, खाता उठा और तल्वार हाथ में लेकर आगे आया। विरूपाक्ष और वह घर से कुछ दूर लड़ने के लिए स्थल देखने गये। बाहर चान्दनी में दोनों जानी दुश्मन की तरह खड़े हो गये। कान्तिवर्मा ने अपनी तलवार उठाकर विरूपाक्ष के वार को रोका। इस तरह काफ़ी देर तक युद्ध चलता रहा। फिर विरूपाक्ष के घावों से खून बहने लगा। वह मूर्छित हो गिर पड़ा।

इसलिए तुम्हारा मुझ से झगड़ना अच्छा नहीं मालूम होता।"

यह विरूपाक्ष के सिर में न घुसा। पहिले ही वह एक और झगड़े में घायल होकर काफी खून खो बैठा था। "तेरे इन घावों के भरने तक मैं यूँ ही तुमसे युद्ध करता रहूँगा।" कान्तिवर्मा के कहने पर भी विरूपाक्ष ने खौल्कर कहा—"आज रात ही, तुझे या मुझे मरना होगा। अगर मर्द हो तो आओ, लड़ो।"

"मैं तुम से युद्ध नहीं करूँगा। मुझे न उकसाओ।" कान्तिवर्मा ने कहा।

जब उसको होश आया तो उसे कान्तिवर्मा का मुँह दिखाई दिया।

"मुझे कहाँ भोंका है?" विरूपाक्ष ने पूछा।

"मैंने तुम्हें कहीं नहीं भोंका है! घायल थे, इसलिए तुम खुद मूर्छित हो गये। सिवाय डरपोकों के कोई बहादुर घायलों से नहीं लड़ता।" कान्तिवर्मा ने कहा।

"यह देख कि तू माधुरी को ले जा रहा है, मुझे गुस्सा आ गया। क्या

माधुरी तुम से सचमुच प्रेम कर रही है!" विरूपाक्ष ने पूछा।

"क्या तेरी आँखे नहीं हैं! उसने तेरी तरफ कैसे देखा, और मेरी तरफ कैसे देखा! क्या तुमने यह नहीं देखा!" कान्तिवर्मा ने पूछा।

विरूपाक्ष ने लम्बी साँस छोड़कर कहा—"मैं तो माधुरी का सुख ही चाहता हूँ।" कहता कहता वह कान्तिवर्मा की सहायता से वापिस घर गया। उन दोनों को देखकर जाम्बवती दह-सी गई। "क्योंकि ये सब मार्यादायें हो चुकी हैं जो दामाद के लिए की जाती हैं, मैं अपनी पत्नी को लेकर जा रहा हूँ। क्या कोई रोकनेवाला है!" कान्तिवर्मा ने जाम्बवती से पूछा।

"यह क्या बेटा! नये दम्पति को तीन रातें बितानी होती हैं। सोल्हवें दिन त्यौहार करना होगा। तब लड़की ससुराल भेजी जाती है।" जाम्बवती ने कहा। कान्तिवर्मा यह जानकर प्रसन्न हुआ कि उसके प्रति उसकी सास का दृष्टिकोण बदल गया था।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। जाम्बवती

ने कान्तिवर्मा के बारे में अपना ख्याल क्यों बदला! क्या इस कृतज्ञता के कारण कि उसने उनके सहायक विरूपाक्ष को न मारा था! या इस भय से कि विरूपाक्ष के हारे जाने के बाद उसके हठ को पूरा करनेवाला कोई न था! इन प्रश्नों का तूने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तेरा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।

"जाम्बवती के बदलने के जो दो कारण तूने बताये हैं, वे बिल्कुल नहीं हैं। उसने अपनी जाति के अहंकार के कारण ही कान्तिवर्मा से द्वेष किया था। विरूपाक्ष जिन्दा है, यह जानने से पहिले ही उसने कान्तिवर्मा को दामाद स्वीकार करने से इनकार कर दिया था। तो भी जाति के अहंकार का भी तो कोई आधार होना चाहिये। जाम्बवती की दृष्टि में कलिंग और चालुक्य शत्रु थे। परन्तु यह साफ़ हो गया कि कान्तिवर्मा में वह शत्रुता न थी। वह विरूपाक्ष को मार सकता था पर उसने न मारा। इससे यह सिद्ध हो गया कि उसमें चालुक्यों के लिए कोई द्वेष न था। यही नहीं, कान्तिवर्मा में जाति सुलभ अहंकार न था। जब विरूपाक्ष उसे ललकार रहा था, उसे चुप देख, जाम्बवती ने उसे डरपोक समझा। वह कायर न था, जाति सुलभ अहंकार का न होना उसमें एक गुण ही है, यह जानते ही जाम्बवती ने भी अपना अहंकार त्याग दिया। यही उसके परिवर्तन का कारण था।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

एक से एक बढ़कर

एक शहर में तीन भाई रहा करते थे। उनके घर अगल बगल में थे। उनकी आँखें बहुत ही कमजोर थीं। कोई वस्तु तब तक न दीखती, जब तक उसे ठीक अपनी नाक के पास न रखते।

एक दिन वे तीनों, बड़े भाई के घर बैठकर गप्पें मार रहे थे। बड़े भाईने कहा—"मेरी नजर काफ़ी अच्छी हो गई है। कुछ दूरी पर मुझे यदि मच्छर भी दिखाई दिया, तो मैं बता सकता हूँ कि वह मादा है या नर।"

"सप्ताह पहिले ही तो तुम बेंहगीवाले पर गिरे थे!" मंझले भाई ने कहा।

"दिन की बात छोड़ो। अन्धेरे में मेरी नजर और भी तेज हो जाती है।" बड़े भाई ने कहा।

"परीक्षा लो, तो पता लग जायेगा कि किसकी नजर कितनी अच्छी है।" छोटे भाई ने कहा।

"क्या है वह परीक्षा!" मंझले भाई ने पूछा।

"सुनो, बताता हूँ।—हमारी गली के सामने जो सराय है उसके दरवाजे पर, सवेरे, धर्मोपदेश की शिला लगाई जा रही है। उस शिला पर खुदे अक्षरों का पढ़ना ही हमारी परीक्षा है। उसके अक्षर, जो हम में सबसे अधिक नजदीक खड़े होकर पढ़ेगा, वह हार जायेगा। जो हारेगा, उसको बाकी को भोजन खिलाना होगा। यह शर्त रही।" छोटे भाई ने कहा।

दोनो भाई यह मान गये। दोनों भाइयों के चले जाने के बाद बड़ा भाई घबराने लगा, क्योंकि शिला को नाक के पास

श्रद्धानन्द

रखे बगैर वह पढ़ नहीं सकता था। बहुत देर तक सोचने के बाद उसे एक बात सूझी। सराय में एक गुमाश्ता था। यदि उससे पूछा गया तो वह बता देगा कि उस शिला पर क्या खुदा हुआ था।

यह बात सूझते ही बड़ा भाई, कन्धे पर दुपट्टा डालकर सराय गया। "लगता है किसी काम पर आये हैं।" सराय के गुमाश्ता ने कहा।

"कुछ नहीं। कल जो शिला लगवा रहे हैं उस पर आपने क्या लिखवाया है!" बड़े भाई ने पूछा।

"कुछ नहीं, "श्रीराम कृपा" लिखवाया है।" गुमाश्ता ने कहा।

बड़ा भाई खुश हुआ। वह घर की ओर चला। सराय के दरवाजे के पास मंझला भाई दिखाई दिया। दोनों की नजर बहुत कमजोर थी ही इसलिये उन्होंने एक दूसरे को नहीं पहिचाना।

जो बात बड़े भाई को सूझी थी, वही बात छोटे भाई को भी सूझी। उसने भी जाकर गुमाश्ता से पूछा कि शिला पर क्या लिखवाया था। दोनों को यही पूछता देख गुमाश्ता को अचरज हुआ। उसने उसको भी वही बताया जो उसके बड़े भाई को बताया था।

मंझला उससे सन्तुष्ट न हुआ। उसने पूछा—"शिला किस रंग की है? अक्षर किस रंग में खोदे गये हैं?"

"सफेद संगमरमर के पत्थर पर सुनहरे अक्षर हैं।" गुमाश्ता ने कहा।

मंझले भाई के चले जाने के बाद, छोटे भाई ने आकर गुमाश्ता से वही पूछा, जो बड़े भाई ने पूछा था। गुमाश्ता ने बता दिया।

"श्रीराम कृपा" के नीचे क्या उसका नाम नहीं दिया गया है, जिसने यह शिला दी है?" मंझले भाई ने पूछा।

"छोटे अक्षरों में फलाने का नाम खुदवाया है। अब शायद पूछना चाहेंगे कि वह किस रंग में है? लाल रंग में।" गुमाश्ता ने कहा।

तीनों भाई—"मैं जीतूँगा, मैं जीतूँगा।" सोचते सोचते सो गये। सवेरे होते ही, बड़े भाई के घर दोनों भाई आये। शिला देखने के लिए सब उतावले हो रहे थे। इसलिये तीनों बिना देरी किये गली में निकल पड़े। बड़े भाई ने झट रुककर सराय की ओर देखकर कहा—"और पास जाने की क्या जरूरत है। शिला के अक्षर यहाँ से दिखाई दे रहे हैं। क्या पढ़ूँ?—"श्रीराम कृपा" बहुत साफ दिखाई दे रहा है।

यह सुन दोनों छोटे भाई हैरान रह गये। उन्होंने सोचा कि वे हार गये थे। मंझले भाई ने पूछा—"शिला किस रंग की है? अक्षर किस रंग में हैं?"

बड़े भाई को लगा जैसे वह किसी गढ़े में गिर पड़ा हो। "रंग? क्या तुझे रंग दिखाई दे रहा है?" उसने मंझले भाई से पूछा।

"रंग क्यों नहीं दिखाई देता? क्या सफेद पत्थर पर सुनहरे अक्षर नहीं दिखाई दे रहे हैं?" मंझले ने पूछा।

"तुम दोनों क्यों लड़ रहे हो? यह देखो कि इस शिला में खुदे छोटे अक्षर कोई पढ़ पाता है कि नहीं। बड़े अक्षर तो अन्धा भी पढ़ सकता है।" संझले भाई ने कहा।

"क्या शिला पर छोटे अक्षर भी खुदे हैं?—" बाकी दो भाइयों ने पूछा।

"दीख तो रहे हैं। लाल अक्षरों में फलाने का नाम साफ लिखा तो है। तुम क्या सोच रहे हो? तुम दोनों की नजर से मेरी नजर अच्छी है।" संझले भाई ने कहा।

बड़े भाई ने कहा—"तेरी नज़र हम तीनों में सबसे अच्छी है। तेरे बाद मेरी नजर अच्छी है। बड़े अक्षरों को मैंने ही तो पढ़ा था। तुम आगे आ रहे थे, मैं ही तो यहाँ रुका था। इसलिये तुझे और मुझे मंझले को भोजन देना होगा।" मंझले ने इस पर एतराज किया। "जो यह न देख सका कि शिला किस रंग की है, अक्षर किस रंग में हैं—उसने अक्षर पढ़े होंगे, इसका कैसे विश्वास किया जा सकता है।"

तीनों काफ़ी देर तक झगड़ा करते रहे। आखिर उन्होंने किसी से फैसला करवाने की सोची। इतने में सराय का गुमाश्ता उस तरफ़ आया—"आप कौन हैं? जरा हमारा झगड़ा निबटाते जाइये। क्या यह झूठ है कि उस शिला पर "श्रीराम कृपा" नहीं लिखा हुआ है?" बड़े भाई ने पूछा।

"नहीं, तो," गुमाश्ता ने कहा।

"शिला सफेद संगमरमर की है कि नहीं? उस पर सुनहरे अक्षर हैं न?" मंझले भाई ने पूछा।

"हाँ, हाँ!" गुमाश्ता ने कहा।

"छोटे अक्षरों में फलाने का नाम खुदा है और अक्षर लाल रंग के हैं। मैं ठीक कह रहा हूँ न?" तीसरे ने पूछा।

"हाँ!" गुमाश्ता ने कहा।

फिर तीनों भाई कहने लगे—"मेरी नज़र अच्छी है।" "मेरी नज़र अच्छी है" वे फिर आपस में झगड़ने लगे।

सराय के गुमाश्ता ने उन्हें रोक कर कहा—"तुम तो काले सफेद में भी भेद नहीं जान पाते हो। मेरी राय में तुम तीनों की नजर एक जैसी ही है। क्योंकि अभी तक सराय के दरवाजे पर शिला लगाई ही नहीं गई है।" वह यह कहकर अपने रास्ते पर चला गया।

अहिंसा ज्योति

लगभग ढाई हजार वर्ष पहिले भारत में सोलह बड़े-बड़े राज्य थे और कई छोटे-छोटे। उनमें कई गणतन्त्र थे। बड़े राज्यों में मुख्य थे, कोशल, मगध, विदेह।

लिच्छिवियों और शाक्यों ने अपने अपने गणतन्त्र स्थापित कर लिये थे। शाक्यों का राज्य हिमालय की तलहटी में था। उसका क्षेत्रफल करीब हजार मील था।

शाक्य कोशल के राजाओं के सामन्त थे। कपिलवस्तु नगरी उनकी राजधानी थी। शाक्यों का राज्य बहुत सुन्दर और समृद्ध था। उसके उत्तर में हिमालय के बर्फ़ीले पर्वत थे। सारे राज्य में घने वन थे। मैदान में चावल की खूब फसल होती थी। किसी चीज़ की कमी न थी।

शाक्य क्षत्रिय थे। उनके राजा का नाम शुद्धोधन था। शाक्य यद्यपि कोशल के सामन्त थे, परन्तु बहुत स्वाभिमानी थे। किसी के सामने आसानी से सिर न झुकाते थे। एक कोशल राजा ने, किसी शाक्य कन्या को जब पत्नी बनाना चाहा तो शाक्यों ने आपस में सलाह मशवरा करके यह खबर भिजवाई कि कोशल राजा शाक्य कन्याओं से विवाह करने योग्य न थे। अपनी कन्या के बदले उन्होंने एक गुलाम लड़की को राजा के पास भेज दिया। कहने

"बुद्ध चरित्र"

का मतलब यह कि शाक्य बहुत स्वाभिमानी थे।

शाक्य राजा शुद्धोधन की बड़ी रानी का नाम था महामाया अथवा मायादेवी। उनकी दूसरी पत्नी का नाम था महाप्रजापति। वे दोनों व्याघ्रपुर राजा की पुत्रियाँ थीं। क्योंकि ज्योतिषियों ने बताया था कि उनके गर्भ से एक चक्रवर्ती या अवतार पुरुष पैदा होगा इसलिये जम्बू द्वीप के कई राजा उनसे विवाह करना चाहते थे। परन्तु उनके पिता ने राजा शुद्धोधन से ही उनका विवाह किया।

एक साल, कपिलवस्तु के निवासियों ने आषाढ़ सप्तमी से, सात दिन तक आषाढ़ोत्सव मनाये। सारे नगर को खूब शोभित किया गया। सात दिन, नृत्य आदि, मनोरंजन में गुजर गये। चतुर्दशी के दिन, यानि उत्सवों के आखिरी दिन— गुलाब जल से स्नान करके, पुष्प माला आदि, पहिनकर, दान-धर्म वगैरह करके मायादेवी जब सोईं तो प्रातःकाल उनको एक स्वप्न आया। सपने में उन्होंने देखा कि आकाश से एक सफ़ेद हाथी आया और दायीं ओर से उनके गर्भ में घुस गया।

सवेरे उठते ही मायादेवी ने शुद्धोधन से अपने सपने के बारे में कहा। उसी दिन चौंसठ वेद पारंगत ब्राह्मणों को बुलाकर, उनको सोने के थालों में उन्होंने भोजन परोसा और वे थाल उनको दे दिये। फिर उन्होंने मायादेवी के स्वप्न का अर्थ उनसे पूछा।

"मायादेवी गर्भवती हो गई हैं। देश में आनन्दोत्सव करवाइये। उनके गर्भ से जो पैदा होगा, यदि उसने सांसारिक जीवन निभाया तो सम्राट होगा और यदि उसने सन्यास ले लिया तो वह महा-बुद्ध होगा।" ब्राह्मणों ने बताया।

दस मास पूरे होते ही मायादेवी ने अपने पति से कहा—"मैं मायकेवालों को देखना चाहती हूँ।" तुरत शुद्धोधन ने उनके जाने के लिए उचित व्यवस्था की, कपिलवस्तु से जो मार्ग व्याघ्रपुर जाता था, उसपर रेत डालकर उसको समतल करवाया गया। रास्ते में पानी आदि का इन्तजाम किया गया। सोने की पालकियों पर मोटे गद्दे बिछाये गये। मायादेवी स्नान करके अपने आभूषण पहिनकर सुशोभित हो अप्सरा-सी चमचमाती पालकी में बैठीं। पालकी को उठाने के लिए हजार उत्तम
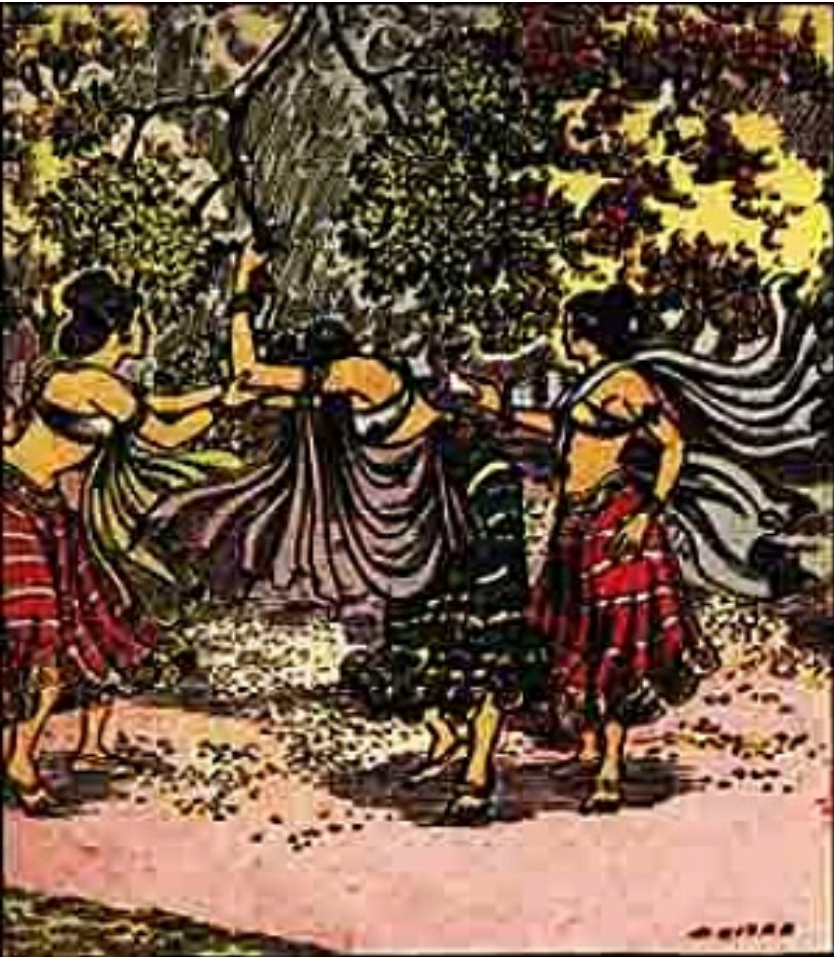
क्षत्रिय पालकी के साथ गये। दासी और रथों के साथ मंगल-वाद्यों के तुमुल घोष में मायादेवी मायके के लिये निकलीं।

व्याघ्रपुर के मार्ग में, कपिलवस्तु नगर के पूर्व में पन्द्रह मील की दूरी पर लुम्बनी वन था। वह वन प्रसिद्ध था। यहाँ टहलने के लिए दोनों नगरों के लोग आया करते थे। पालकी के, लुम्बनी वन में पहुँचते ही मायादेवी ने वहाँ थोड़ी देर विश्राम करना चाहा। वह वैशाख मास था। वसन्तकाल। वन के वृक्ष फूलों से लदे थे। सारा वन महक रहा था। पुष्पों का मधु पीते भौरें गुँजन कर रहे थे। पेड़ों पर बैठे तरह तरह के पक्षी मधुर गान कर रहे थे।

मायादेवी उस वन की शोभा निहारती चलने लगीं। वे एक शाल वृक्ष के पास गई थीं कि उनको प्रसव होता-सा लगा। उन्होंने किसी चीज़ को पकड़ना चाहा। तुरत उस शाल वृक्ष की शाखा उनके सहारे के लिए झुक गई। उसी समय प्रसव आरम्भ हो गया।

उनके साथ की परिचारिकाओं ने उनके चारों ओर परदे फैला दिये। मायादेवी ने पूर्व की ओर मुँह करके बिना किसी प्रसव वेदना के उस वन में एक लड़के को जन्म दिया।

उस दिन वैशाख पूर्णिमा, मंगलवार, और विशाख नक्षत्र था। उसी दिन कपिलवस्तु नगर में यशोधरा पैदा हुई। कंटक नाम का घोड़ा पैदा हुआ। चेन्ना, आनन्द और कालादाया पैदा हुए। और गया के पास बोधि-वृक्ष पैदा हुआ।

(इन सब का बुद्ध के जीवन से सम्बन्ध था। यशोधरा बुद्ध की पत्नी हुई। बुद्ध जिस दिन सन्यास लेकर घर से निकले

तो वह कंटक पर ही सवार हो कर गये थे। तब बुद्ध के साथ चेन्ना गया था। आनन्द ने बुद्ध की आजीवन सेवा की। अपने सन्यासी पुत्र को बुलाने के लिये शुद्धोधन ने काल्दाया को दूत बनाकर भेजा था। गया में, बोधि वृक्ष के नीचे ही बुद्ध ने बुद्धत्व पाया था।)

कहते हैं कि जिस दिन बुद्ध पैदा हुये उस दिन बहुत-सी आश्चर्यजनक चीजें देखने में आईं।

क्योंकि मार्ग में ही प्रसव हो गया था इसलिये मायादेवी मायके न गईं। अपने शिशु और नौकर चाकरों को लेकर वे कपिलवस्तु लौट आईं।

हिमालय में असित नाम का मुनि तपस्या किया करता था। क्योंकि उसकी तपस्या कभी की सफल हो चुकी थी इसलिये, चाहने पर सब लोक, सुना जाता था, वह देख सकता था। बोधिसत्व के पैदा होते ही इन्द्रलोक में देवताओं के आनन्द उल्लास को देखकर उसने सोचा कि इन्द्र के पद के लिए कोई और आया होगा। उसकी उत्सुकता बढ़ी। पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि शुद्धोधन के पुत्र पैदा हुआ था। और वह पैंतीस वर्ष बाद बुद्ध बनेगा।

तुरत असित कपिलवस्तु नगर गया। शुद्धोधन ने उसका भक्तिपूर्वक स्वागत किया। उसने अपने लड़के को उसके पैरों पर रखना चाहा।

अगर उस शिशु ने उसके पैरों का छुआ तो उसका सिर सात टुकड़ों में फूट सकता था, यह सोचकर असित ने उसके पैर पकड़कर अपने माथे पर लगा लिया। फिर उसने उस शिशु के चारों ओर तीन बार प्रदक्षिणा की। यह सब देख स्वयं

शुद्धोधन ने अपने पुत्र के सामने साष्टांग किया। शुद्धोधन का बुद्ध के सामने यह पहिला प्रणाम था।

"राजा, मैं ब्रह्मा और इन्द्र को भी प्रणाम नहीं करता। मेरी आज्ञा पर सूर्य चन्द्र रुक जाते हैं। फिर भी मैंने तुम्हारे शिशु को प्रणाम किया है।— यह कहकर असित ने शिशु की परीक्षा की। उसमें बत्तीस मांगल्य लक्षण थे। यह जानते ही कि वह अवश्य बुद्ध होगा असित का मुंह आनंद से खिल उठा। वह सन्तुष्ट हुआ।

फिर उसने भविष्य देखा। उसने अपना आनन्द स्पष्ट व्यक्त भी किया। उस शिशु के बुद्ध होकर उपदेश देने के समय वह मर चुका होगा। उसके उपदेश सुनना उसके भाग्य में न था। यह देख वह आँसू बहाने लगा। अपने को अभागा समझने लगा।

असित को पहिले हँसते फिर आंसू बहाते देख शुद्धोधन आदि घबराये। उन्होंने पूछा—"स्वामी, आप क्यों आँसू बहा रहे हैं! क्या बच्चे पर कोई आपत्ति आनेवाली है? बच्चा क्या चिरंजीवी नहीं होगा, स्वामी!"

"नहीं, नहीं। इस बच्चे पर कोई आपत्ति न आयेगी। पैंतीस वर्ष के होने पर यह बुद्धत्व को प्राप्त कर मानव जाति को मुक्ति का उपदेश देगा। उन उपदेशों को सुनने के लिए, बुद्ध को अपनी आँखों से देखने के लिए मैं इस संसार में जीवित न रहूँगा।" यह सोच कर मैं शोक कर रहा हूँ।

फिर असित ने सोचा कि उसके लोगों में, किसको बुद्ध को देखने का भाग्य मिलेगा! उसे दिव्यदृष्टि से पता लगा कि उसके शिष्य के भांजे नरदत्त को वह भाग्य मिलेगा। उसने नरदत्त से कहा—"बेटा, तुम तुरत सन्यास लेकर तपस्या प्रारम्भ करो। बुद्ध के उपदेश सुनकर मोक्ष पाने का तुम्हें अवसर मिलेगा।"

नरदत्त काषाय वस्त्र पहिनकर सन्यास लेकर हिमालय में तपस्या करने लगा। असित ऋषि का कहना ठीक निकला। बुद्ध के उपदेशों को काशी में सुनने का भाग्य कालक्रम से उसको मिला।

बच्चे का पाँचवें दिन नामकरण संस्कार किया गया। वह उत्सव बड़े जोर शोर से मनाया गया, क्यों कि वह लड़का शुद्धोधन

का इकलौता था और बहुत दिन बाद पैदा हुआ था। सभी के लिए वह सन्तोष का कारण था। उस दिन शुद्धोधन ने एक-सौ आठ ब्राह्मणों को भोजन देकर लड़के की जन्मपत्री जाननी चाही।

जन्मपत्री तैयार करने के लिए आठ ब्राह्मण निर्वाचित हुये। उनमें से सात ने कहा कि यह बच्चा सम्राट होगा नहीं तो बुद्ध। आठों में सबसे छोटे सुदत्त ने साफ़ साफ़ कहा—"यह कभी सम्राट न होगा। यह बुद्ध ही होगा।"

ब्राह्मणों ने मिलकर शुद्धोधन से कहा—"महाराज, इस शिशु के कारण संसार का बहुत कल्याण होगा। उसकी सब इच्छायें पूरी होंगी। इसलिये इसका नाम सिद्धार्थ रखिये।"

गौतम शाक्यों का वंश-नाम था। इसलिये शुद्धोधन का लड़का, गौतम, गौतम सिद्धार्थ व सर्वार्थसिद्ध नाम से संसार में जाना गया।

नामकरण उत्सव में अस्सी हजार शाक्य उपस्थित हुये। उन सब ने भी शुद्धोधन की तरह सोचा कि वह अवश्य सम्राट बनेगा। होनेवाले सम्राट को अनुयायी चाहिये थे। इसलिये उन सबने अपने लड़कों को बुद्ध के साथ विद्याभ्यास के लिए भेजना का निश्चय किया। सिद्धार्थ के जन्म के सातवें दिन बाद मायादेवी इस दुनियाँ से चली गईं। शुद्धोधन ने अपने लड़के को दूध देने के लिए सौ दासियों को नियुक्त किया। कई हजार स्त्रियों को परख कर ये स्त्रियाँ चुनी गई थीं, ताकि वे न तो बहुत लम्बी हों, न नाटी हों और स्वस्थ हों।

(अभी है)

अरब के रेगिस्तान में बदानी नाम की एक जाति रहती है। उस जाति के लोग एक जगह नहीं बसते, रेगिस्तान में घूमते-फिरते हैं। बचपन में ही, ये तलवार चलाना, भाला फेंकना, आदि सीख लेते हैं। हत्या करने का ज्ञान तो वे माँ के दूध के साथ पाते हैं। मरना मारना इन लोगों की परम्परा है। बदानी टोलियों में हरेक का अपना अपना नाम होता है, पर सब अपने को इस्माइल की सन्तान बताते हैं।

कई सदियों पहिले "बेनीसाम" नाम की एक बदानी टोली थी। इस टोली का एक सरदार था। उसका नाम "मरुभूमि भयंकर" था। इसके आखिरी लड़के का नाम कनाना था। उन लोगों की रीति के अनुसार छोटा लड़का पिता की मेड़ें चराया करता था। इसलिए कनाना ने पाँच साल पूरे होते ही, स्त्रियों के साथ छाछ बनाना, मक्खन बनाना आदि काम सीखे। दस वर्ष खतम होते ही लठिया लेकर वह भेड़ों और ऊँटों को चराने लगा।

इस तरह तीन साल के बीत जाने पर पिता ने कनाना से पूछा—"क्या भाला पकड़ना सीखोगे?"

"पिताजी! मैं सिवाय अल्लाह और अरेबिया के लिए भाला हाथ में लेकर दूसरों का प्राण न ले सकूँगा।" कनाना ने कहा। उस जाति में मरने-मारने के सिवाय कोई कुछ नहीं जानता था। इस लड़के में यह अजीब ख्याल कैसे आया था, यह कोई अनुमान न कर सका।

"क्या तू अरब नहीं है? क्या तू इस्माइल की सन्तान नहीं है?" पिता ने

मोहम्मद यूसुफ

यद्यपि उसने अस्त्र पकड़ने से इनकार कर दिया था, तो भी उसमें कुछ शक्तियाँ थीं। वह आसानी से जन्तुओं को वश में कर लेता। बेनीसाम टोली में उसके बराबर घोड़े पर, या ऊँठ पर सवारी करनेवाला कोई न था। सब खेलों में वह अव्वल था। उसकी नज़र भी बहुत तेज़ थी। अगर रात को कोई भेड़ चुराने आता, तो और लड़कों की अपेक्षा उसको यह जल्दी मालूम हो जाता। वह जितनी दूर पत्थर फेंक सकता था, उतनी दूर और कोई नहीं फेंक पाता था।

ये सब योद्धाओं के लक्षण थे। इन गुणों के बावजूद भी, अपने लड़के को, योद्धा न बनते देख बूढ़ा पिता चिन्तित रहा करता।

रेगिस्तान के सिरे पर, एक नदी के किनारे बेनिसाम टोली साल में तीन महीने रहा करती थी। वे वहाँ बीज बोते और फसल काट कर चले जाते। काले कम्बल के लगभग पाँच सौ डेरे चारों ओर गड़े रहते। डेरों के इधर-उधर नदी के किनारे उनके खेत थे। जब फसल पकती तो, खेतों में मचान बना कर, स्त्री, बूढ़े, बच्चे, उन पर रहते, और पशु-पक्षियों से फसल

पूछा। परन्तु कनाना को यह तर्क न जँचा। वह जानता था कि अल्लाह सब की सृष्टि करता है। और वह सारी सृष्टि का संरक्षक है अगर उसने किसी जन्तु की हिंसा की तो अल्लाह उसे माफ़ न करेंगे। उस हालत में, पशुओं से उत्तम्तर, मनुष्यों को मारना गलती नहीं है क्या!"

कनाना को सब नीची दृष्टि से देखने लगे। टोली का यह ख्याल था कि वह निरा डरपोक था। वे उसे इधर-उधर के काम सौंपने लगे। कनाना को यह पसन्द न था।

की रक्षा करते। फसल कटने तक इस तरह उनका पहरा रहता।

इस साल कनाना को किनारे के एक मचान में रखा गया। उसका इस प्रकार अपमान होना ही चाहिए था, सब ने कहा। वह यह न जानता था कि टोली में कैसे आदर पाया जाता था, या बहादुरी कैसे दिखाई जाती थी। सब के डरपोक कहने से तो अच्छा यही था कि वह कहीं दूर पड़ा रहे।

* * *

कल फसल कटनेवाली थी कि कनाना के पिता को एक दुखद समाचार मिला। उसके दो लड़के, चार ऊँटों पर शहद, ईन्धन, मिट्टी लेकर एक काफले के साथ गये। रास्ते में उनको एक और टोली ने लूट लिया। उन डाकुओं की टोली का सरदार रशीद था। रशीद की टोली में, और बेनीसाम टोली में शत्रुता थी। इसलिए उसने कनाना के दोनों भाईयों और चार ऊँटों को पकड़ लिया। बड़ा भाई तो बन्दी बना लिया गया, पर दूसरा भाई घायल होकर, उनके फन्दे से छूटकर घर पहुँचा।

यह सुनकर गुस्से में, "मरुभूमि भयंकर" कनाना की जगह पर आया। कनाना मचान पर ध्यानमग्न-सा बैठा था। पक्षी फसल खा रहे थे, जो दोपहर को उसके लिए खाना भेजा गया गया था, वह भी उसने न छुआ था। यह सब देख, बूढ़ा और भी खौल उठा।

"अरे, अभागे। तू तो हमारे खानदान में गलती से पैदा हुआ है। तुम्हें खेत में पहरे पर रखा, और तुम पक्षी भी नहीं भगा पाते हो! न तू मर्दों का काम कर पाता है, न औरतों के ही। किस काम

आओगे ! क्या करूं ! कितने कष्ट हैं !" उसने लड़के को डाँटा-डपटा।

"पिता जी ! आप पर क्या कष्ट आ पड़े हैं !" कनाना ने पूछा।

"जो सब जानते हैं—वह भी तू नहीं जानता !" पिता ने पूछा।

"तीन सप्ताह से इस मचान पर से नहीं उतरा हूँ। मुझसे कोई बात नहीं करता, कोई कुछ नहीं बताता।" कनाना ने कहा।

पिता ने कनाना से रशीद की करतूत के बारे में कहा। सच पूछा जाय, तो बूढ़े को बहुत नुकसान नहीं हुआ था। काफले के जो ऊँठ, रशीद के हाथ में फँस गये थे, उनमें तीन तो बूढ़े थे, एक सफेद ऊँठ ही अच्छा था। उन पर लदा माल भी कोई खास कीमती न था। फिर भी कनाना को लगा कि उस सफेद ऊँठ, और अपने बड़े भाई को छुड़ाना उसका धर्म था।

"पिता जी, मुझे एक घोड़ा, अनाज का थैला, पानी की मशक दीजिये, रशीद का पीछा करूँगा। मैं उसे मारूँगा तो नहीं पर भाई और सफेद

ऊँठ को छुड़ा लाऊँगा।" कनाना ने कहा।

"जा बे जा! ऊँघ मत! अन्धेरा होने तक पक्षी भगा। यही काफी है। कल सवेरे फसल कटनी शुरू होगी।" पिता ने कहा।

"अन्धेरा होने तक मैं पक्षी भगाऊँगा। पर मैं फसल काटने के लिए यहाँ न होऊँगा। सवेरा होते होते मैं भाई के लिए बहुत दूर जा चुका हूँगा।" कनाना ने कहा।

"मैं तेरा विश्वास कर तुझे घोड़ा न दूँगा।" पिता ने कहा।

"कोई बात नहीं, मैं पैदल ही चला जाऊँगा। मुझे आशीर्वाद दीजिये।" कनाना ने कहा।

"पहिले जीतकर आ, तब आशीर्वाद दूँगा।" पिता ने कहा।

* * *

सूर्यास्त हो ही रहा था कि कनाना मचान से उतरा। खेत से थैला भरके अनाज लेकर, उसे कन्धे पर डाल, एक लठिया ले, रेगिस्तान में पश्चिमोत्तर दिशा की ओर वह चल पड़ा।

रशीद के हथकंडो के बारे में कनाना अधिक न जानता था। उसने जिस काफले

को लूटा था, वह कुछ दिन पहिले मक्का की ओर गया था। सुना गया कि रशीद, उस टोली को लूटकर डमास्कस की ओर गया था। रेगिस्तान के बीच में होर नाम का पहाड़ था, उसकी चोटी पर खड़े होने से चारों ओर का रेगिस्तान दिखाई देता था। रशीद के उस पहाड़ के पार करने से पहिले वह वहाँ नहीं पहुँच सकता था। परन्तु कनाना को यह उम्मीद थी कि उस पहाड़ पर खड़े होकर रशीद की टोली देखी जा सकती थी—क्योंकि उसकी नज़र बहुत तेज थी ही।

अरेबिया से, उत्तर की ओर जेरुसलम, डमास्कस जानेवाले काफले, सीरिया से मक्का और मदीने की ओर आनेवाले काफले वहाँ पड़ाव करते थे। अगर कोई सामने से काफला आया तो उससे रशीद की टोली के बारे में मालूम किया जा सकता था, यह सोच कनाना होर पहाड़ की ओर चला।

कनाना को यह डर न था कि वह रास्ते से भटक जायेगा। दिन में सूर्य को देख कर, रात में तारे देखकर बदानी, आसानी से रेगिस्तान में कहीं भी जा सकते थे। कनाना—रात भर चलता रहा, अगले दिन जब धूप कड़ी हुई तो एक पत्थर के नीचे सो गया। वह दो दिन पैदल चला। दूसरे दिन सूर्यास्त के समय उसने कुछ दूरी पर होर पहाड़ देखा। उस पहाड़ पर एक छोटा-सा नाला था। नाले में पानी पीकर वह उसके किनारे ही सो गया।

सवेरे, सूर्योदय के समय उठकर उसने चारों ओर देखा—उसे वहाँ कई ऐसी चीज़ें दिखाई दीं, जिनसे यह अनुमान किया जा सकता था कि आधा दिन पहिले ही

कोई काफला वहाँ पड़ाव करके मक्का मदीने की ओर गया था। उसे विश्वास हो गया कि उस काफले के साथ उसका भाई था। उसे यह सोच आनन्द भी हुआ। शायद उस काफले के बारे में कुछ मालूम हो सके, यह सोचकर वह पहाड़ की चोटी पर चढ़ा। पर उसे कुछ न मालूम हो सका। इतने में सूर्य पूरी तरह उदय हो गया। उसने सवेरे की नमाज़ पढ़ी और अल्लाह से प्रार्थना की कि वह उसको अपने काम में कामयाबी दे।

* * *
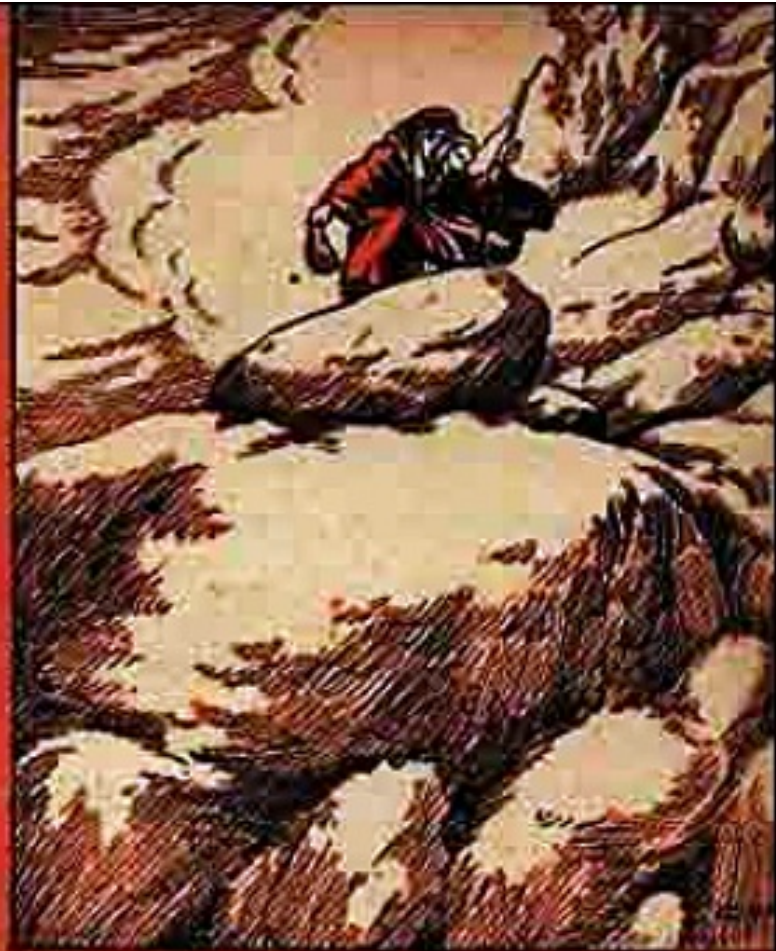
कनाना पहाड़ पर चढ़ रहा था। ठीक उसी समय पहाड़ के नीचे पाँच, छः अरबी सैनिक घोड़ों पर सवार होकर आये। वे अरेबिया के उत्तर प्रान्त से आ रहे थे। वे बहुत तेजी से आये थे। वे सैनिक घोड़ों से उतर पड़े। कुछ खाकर अपने घोड़ों की रस्सियों को अपने शरीर से बाँधकर, घास पर सो गये।

थोड़ी देर बाद तीन बदानी चोर उस तरफ़ आये। उन्होंने घोड़े चुराने चाहे। परन्तु मालिकों को बिना मारे घोड़े नहीं मिल सकते थे। उन्होंने उन पाँच छः सैनिकों को मारा। उनके कपड़े और हथियार छीन लिए। फ़िर घोड़े लिए। तीन पर तो वे सवार होकर निकले, और दो को चलाते चले गये।

जब चोर सैनिकों को मार रहे थे, तब उनका चिल्लाना सुन, कनाना काँप गया था। वह जान गया कि कोई भयंकर घटना हो गई थी। उसने नीचे आकर जो देखा तो उसका सिर चकरा गया। वह खून न देख सका। सिर मोड़कर जा ही रहा

था कि उसको एक सैनिक का कराहना सुनाई दिया। कनाना हिम्मत करके उस कराहते सैनिक के पास गया।—"पास, पास" उस सैनिक ने कहा।

कनाना ने अपनी मशक से उस सैनिक को, जिसमें बची खुची जान कहीं अटकी पड़ी थी, पानी पिलाया। सैनिक ने आँखें खोलकर कनाना को देखकर कहा—"बेटा, अभी तो तुम्हारे दाढ़ी मूँछें नहीं आई हैं। पर तुम अरब हो। अरबों का नाश करने के लिए, हिरोक्लिस सम्राट का लड़का, कोन्स्टेन्टीन, टर्क, ग्रीक, रोमन सैनिकों को लेकर आ रहा है। यह बात खलीफ़ा से कहकर हम उनकी सहायता माँगने के लिए एक चिट्ठी ले जा रहे हैं। इस समय खलीफ़ा मक्का में हैं। क्या यह चिट्ठी उनको पहुँचादोगे? अल्लाह की कसम।" उसने कहा।

"अल्लाह की कसम! जरूर पहुँचा दूँगा।" बिना हिचके कनाना ने कहा। सैनिक ने एक चिट्ठी निकालकर उसे दी। उसके बाद सैनिक ने प्राण छोड़ दिये।

जिस काम पर निकला था, उस काम को छोड़कर सैनिक को इस प्रकार वचन देकर, कनाना स्वयं अचरज कर रहा था। यह उसके लिए एक परीक्षा है, अल्लाह की शपथ करके, वह इसे करने के लिए मान गया था।

इस बीच उसे एक और बात याद आ गई कि जिस काफले का वह पीछा कर रहा था वह दक्षिण की ओर जा रहा था। मक्का उसी तरफ था। इसलिए सैनिक को दिये हुए वचन को निभाने के लिए, यह जरूरी न था कि वह रास्ता छोड़कर जाये।

(अभी और है)

प्रकृति के आश्चर्य

[७]

कुयेबाबा बहुत तेजी से भागने लगा। मैं उसके साथ न भाग सका। आखिर हम दोनों नदी में आ कूदे। घुटने भर पानी में जाकर हमने जो किनारे की ओर देखा तो जमीन, पेड़ आदि, ऐसे लगते थे जैसे उन पर तारकोल पोत दिया गया हो। उन पर चींटियाँ चढ़ी हुई थीं। उनके शोर से हमारे कान फूटे जा रहे थे। देखते देखते हमारे पास ही, किनारे पर, हमें ऐसा लगा जैसे कोई काली कालीन बिछा दी गई हो।

इतने में चींटियां पेड़ों पर से उतर आईं और एक विशाल गेंद के रूप में जमा हो गईं। फिर वह गेंद नदी में लुढ़कती बहती बहती, उस पार कुछ दूरी पर लगी।

ये "सिपाही चींटियाँ" बड़ी विचित्र होती हैं। वे अपना गम्यस्थान जानती हैं। उनके रास्ते में आग हो या पानी, वे नहीं रुकतीं। आग रास्ते में हुई तो लाखों चींटियाँ राख हो जाती हैं और बाकी के लिए इस तरह रास्ता बनाती हैं। जब पानी में वे बहती हैं तो बाहर चिपकी चींटियाँ मर जाती हैं। उनकी लाशों पर दूसरी चींटियाँ आगे बढ़ जाती हैं। वे एक ही मन्त्र जानती है—वह है, समाज के लिए व्यक्ति का त्याग।

चींटियों के चले जाने के बाद, हम आग के पास गये। वहाँ अब केवल जंगली सूअर का अस्थिपंजर ही रह गया था। आग बुझ बुझाकर राख हो चुकी थी। "अगर हम वहीं रहते तो हमारी भी यही गति हुई होती।" कुयेबाबा ने जंगली सूअर के अस्थिपंजर को दिखाते हुए कहा।

जंगल में रहनेवाले जन्तुओं में सबसे अधिक घातक कौन था, यह मैं जान गया।

जंगली सूअर के अस्थिपंजर को वहाँ छोड़कर हम जंगल में चले। मैं आगे जा रहा था। उस लड़के ने मुझे कमर पकड़कर खींचा। मैं नीचे गिर पड़ा। मेरे साथ वह भी नीचे लेट गया।

उसने ऐसा क्यों किया था, मैं जल्दी ही जान गया। एक बड़ा-सा अजगर पेड़ की टहनी से नीचे खिसक रहा था। वह चार गज़ से भी बड़ा होगा। उसके चले जाने तक हम ज़मीन से चिपक कर पड़े रहे। अजगर ज़हरीला तो नहीं होता, पर वह पशुओं को अपनी लपेट में ले लेता है और उनकी हड्डियाँ तोड़ देता है। फिर उन्हें वह निगल जाता है।

हमने फिर चलना शुरू किया। कुछ दूर जाने के बाद लड़का रुका और गौर से देखने लगा। हमारी दायीं ओर आर्मिडिलो नामक जन्तु था। मैंने उतना बड़ा आर्मिडिलो कभी न देखा था। हमें देखते ही वह गेंद के रूप में सिकुड़ गया। इस तरह लिपटकर बैठ जाने से उसका शरीर कवच का काम करता है। उस गेंद में से केवल उसका मुँह और पूँछ ही बाहर दीख पड़ते हैं।

कुयेबाबा ने उसको उठाकर रस्सी से बाँधना चाहा। परन्तु वह उसके हाथ से गिरा और बिजली की तरह जंगल में भाग गया। हम दोनों ने उसका पीछा किया। वह एक टीले के खोल में घुस गया।

कुयेबाबा ने सूखी लकड़ियाँ रगड़ कर फिर आग बनाई। मैंने ईन्धन इकठ्ठा किया। जल्दी आग जलने लगी। जलती लकड़ियों को हमने खोल में रखा, उसपर हरे पत्ते रख दिये। सफ़ेद धुँआ आने

लगा। धुयें को बिल में भेजने के लिए कुयेबावा, पत्ते से पंखा करने लगा। बिल में आर्मिडिलों का सांस घुटने लगा, वह छटपटाने लगा। हम उसका छटपटाना सुन सकते थे। थोड़ी देर में वह बाहर आ गया। कुयेबावा ने उसे पकड़ना चाहा। वह घुटकर मरने को तैयार था, पर उसे कुयेबावा के हाथ में आना पसन्द न था। इसलिए वह फिर खोल में घुस गया। परन्तु लड़के ने उसकी पूँछ पकड़ ली। वह उसे खोल में खींचने लगा। उसका बल ही कुछ ऐसा था।

उसने मुझे बुलाया। मैंने भी उसकी पूँछ पकड़कर खींची। फिर भी वह बाहर न आया। आखिर जैसे तैसे उसे खींचा। एक चोट मारी, फिर उसका गला रस्सी से बाँध दिया।

"कुयेबावा, मुझे बड़ी प्यास लग रही है। क्या यहाँ पीने के लिए पानी मिल सकेगा?" मैंने कहा। उसने एक क्षण मुझे रुकने के लिए कहा। फिर एक पेड़ की लटकती जड़ों को काट लाया। "यह लो पानी।" उसने कहा।

मैंने सोचा कि शायद वह मेरी हंसी उड़ा रहा था। परन्तु जब उसने जड़ के एक सिरे को मेरे मुख पर रखा, तो उसमें से जल मेरे मुख में गिरा। उस पानी का स्वाद बहुत अच्छा था।

"न्यिकू बाप शायद पानी की जड़ों के बारे में नहीं जानता है?" उसने पूछा।

"यह सब तुमने कहाँ सीखा?" मैंने पूछा।

"अनुभव और आवश्यकता हो तो सब कुछ मालूम हो जाता है, यह हमारा मलोयाबावा कहा करता है।" उसने कहा।

हमारे वापिस जाने से पहिले लड़के ने बाण से, एक जंगली मुर्गी, दो लाल

अविवेकी

काशी के बाहर—एक बूढ़ा गड़रिया रहा करता था। वह अपने भेड़ों को चरने छोड़ देता और पेड़ के नीचे बैठकर बाँसुरी पर तान छेड़ता। एक दिन एक अप्सरा उसके संगीत पर मुग्ध होकर उसके सामने प्रत्यक्ष हुई। उसने उस बूढ़े को अपनी महिमा द्वारा एक गन्धर्व कुमार के रूप में बदल दिया—"तुम हमारे लोक में आकर हमेशा मुझे बाँसुरी सुनाया करो।"

युवक होकर—देवताओं के वस्त्र पहिनकर गड़रिये ने अप्सरा से कहा—"अच्छा आऊँगा, पर मुझे थोड़ा समय दो—ताकि मैं शहर जाकर अपने दोस्तों से कह आऊँ।" अप्सरा मान गई। उसको सफेद घोड़ों से जुते, सोने का रथ उसने दिया। वह जब उस पर चढ़कर शहर में से जा रहा था—तो महल से राजकुमारी ने उसे देखकर अपने नौकरों से कहा—"उस रथ में जानेवाले युवक से कहो कि मैं बुला रही हूँ।"

जब उसे मालूम हुआ कि राजकुमारी उसे बुला रही है तो उसे लगा कि वह उससे प्रेम कर रही है। उसने जाकर राजकुमारी को प्रणाम किया—"देवी, मुझसे तुरत शादी कर लो। मैं तुम्हारा पति होकर काशी पर राज्य करूँगा।"

तुरत पहिले के रूप में वह आगया—"कौन है, यह बूढ़ा खूसट! इसे तुरत गली में धकेल दो।" राजकुमारी ने कहा।
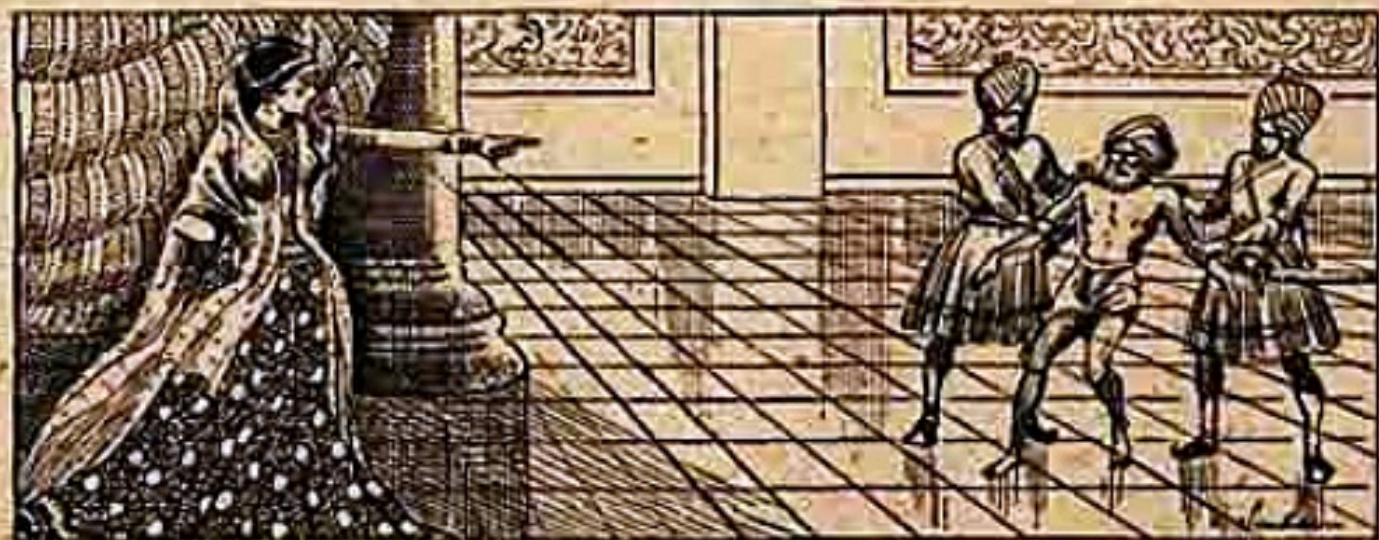
विचित्र बातें

नकली चोर

एक सिनेमा के सितारे के पास कीमती मोतियोंवाला हार था। ताकि उसे कोई ले न जाये, वह उसे बिना ताले के एक दराज़ में रखती—साथ ही एक चिट पर यह भी लिखकर रखती—"ये नकली मोती हैं।" फिर भी किसीने वह हार चोरी कर लिया। चोर ने उस दराज़ में, एक चिट यों लिखकर रखी—"मैं नकली चोर हूँ। असली चोर कल पकड़ा गया—मैं उसके बदले आया हूँ। मेरे लिए ये नकली मोती काफी हैं।"

छुट्टी

रंगा के दो जुड़वे भाई पैदा हुए। उसके पिता ने उससे कहा—"रंगा, यह तुम जाकर अपने मास्टर साहब से कहो, वे तुम्हें छुट्टी दे देंगे।" रंगा स्कूल गया—और जल्दी ही कूदता फांदता वापिस चला आया।

पिता :—"जुड़वें भाइयों के बारे में मास्टर साहब से कहा था?

रंगा :—एक भाई के बारे में ही कहा था।

पिता के क्यों पूछने पर रंगा ने कहा—"दूसरे भाई के बारे में अगले सप्ताह कहूँगा, और एक और छुट्टी लूँगा।"

मुँहतोड़ जवाब

एक बूढ़े ने अपने लड़के से कहा—"अरे तेरा लड़का, छुटपन में तुझ से अधिक अक़्लमन्द मालूम होता है।" "हाँ—पिता जी। मेरे पिता की अपेक्षा उसका पिता जो अधिक अक़्लमन्द है।" लड़के ने कहा।

(गत मास के प्रश्नों के उत्तर)

(१) सब बन्धु एक दिन ही मिलते हैं। ऐसे दिन २५ हैं, जब कोई नहीं आता।

(२) बाबा, १८६६ में पैदा हुआ। १९२२ में उसकी उम्र ६६ थी। पोता १९१६ में पैदा हुआ। १९२२ उसकी उम्र १६ थी।

(३) रंगा के पास पहिले पहल एक रुपया पाँच नये पैसे ही थे।

चूहे, दो तोतों को मारा। मैंने, उसे पचास गज़ दूरी पर बैठे पक्षी को निशाना मारते देखा। उनकी जाति में कुछ ऐसे हैं, जो सौ गज की दूरी पर की चीज़ को भी निशाना लगा कर मार सकते हैं।

हम जहाज के पास जब गये तो वह किनारे पर खींच दिया गया था। उसकी मरम्मत की जा रही थी। जो उस काम में लगे हुए थे वे हमें देखते ही काम छोड़कर विश्राम करने लगे। सब सवेरे से भूखे मर रहे थे। बारह बजने वाले थे। इसलिए वे हमारे लाये हुए भोजन को देखकर बड़े खुश हुए। कई ने उसको कन्धों पर उठा लिया। "तीस आदमियों के लिए शिकार मार कर लाने वाला मामूली आदमी नहीं है।" उन्होंने यह कह कर उसका अभिनन्दन किया। कुयेबाबा यह सुनकर हँस पड़ा जैसे उसने प्रशंसा सुनी ही न हो।

आदमी फिर जहाज के काम पर लगा गये। हम दोनों, स्त्रियों की मदद से खाना पकाने के काम में लग गये। पकाने के लिए मसाले वगैरह न थे।

कुयेबाबा जंगल में जाकर जंगली प्याज और पेड़ों की छाल ले आया। छालों को पीस कर उस प्याज के साथ भूनने पर अच्छा मसाला बन गया।

जल्दी ही खाना बन गया। भोजन के बाद जहाज की मरम्मत शुरु हो गई। उसकी पेंदी में दो तख्तों पर ही चोट लगी थी। कल सवेरे वह काम समाप्त हो सकता था, यह मालूम हुआ। उन्हें यह सोच कर दुख हुआ कि कल दोपहर को कुयेबाबा से विदा होना पड़ेगा। (अभी और है)

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अप्रेल १९५९ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, फरवरी '५९ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

फ़रवरी – प्रतियोगिता – फल

फरवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : मुझे देख
दूसरा फ़ोटो : तुम मुस्कराई !
प्रेषक : मा. ता- नायानी
C/o श्री हेडमास्टर जी, कुर्वेज न्यू मोडल हाई स्कूल, शिरपानन्द पेट, नागपुर.

चित्र - कथा

दास और वास एक बड़ा पतंग तैयार करके शहर के बाहर उड़ाने गये, वहाँ एक और बड़ा लड़का पतंग लेकर आया। उसने दास और वास से बाज़ी लगाई। पतंगे छूटीं। बड़े लड़के के पास बहुत-सा तागा था, इसलिए वह खूब ऊँची उड़ती जाती थी। उस समय "टायगर" वास के हाथ का तागा काटकर भागा। पतंग ने "टायगर" को ऊपर हवा में उठाकर कीचड़ में फेंक दिया। इस बीच दास और वास की पतंग बड़े लड़के की पतंग से ऊपर उड़ गई।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3 Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Photo by Madangopal

उत्सव

तुम मुस्कराई !

प्रेषक :

CHANDAMAMA (Hindi) FEBRUARY 1959 Regd. No. M. 5452

बुद्ध चरित्र